

ॐ

दीपचंदजी केसरीचंदात्मज लूणिया के स्मरणार्थ

धर्मरत्न प्रकरण सार

अर्थात्

कथा सहित श्रावक के २१ गुण व बारह
व्रतों का वर्णन और पक्खी अतिचार

संस्कृत टीका के आधार पर

लेखक—मुनि माणक्य

प्रासिद्धकर्त्ता रामलाल (रामचन्द्र) लूणिया

नया बाजार, अजमेर.

डॉक्टर धारसी गुलाबचन्द संघाणी H. L. M. S. के प्रबंध

से जैन सुधारक प्रेस, अजमेर में मुद्रित हुआ.

वीर संवत् २४४२ }
सन् १९१६ }

प्रथमावृत्ति १०००

{ मूल्य
सदुपयोग }

प्रस्तावना—

धर्म रत्न प्रकरण का मूल और गुजराती भाषांतर पालीताणा विद्यो प्रसारक वर्ग ने छपाया है जिसमें मार्गागुसारी के ३५ गुण और कथा, श्रावक के २१ गुण और कथा, श्रावक के १२ व्रत, साधु के और पांच महाव्रत का वर्णन अच्छी तरह है उसके हिंदी भाषांतर की बहुत आवश्यकता थी तो भी द्रव्य की संकीर्णता से थोड़े में अधिक लाभ हो इस तरह योजना कर संस्कृत मागधी जो विवेचन गाथाओं के साथ मूल ग्रंथ में है उनका सार लेकर यही ग्रंथ तैयार किया है।

केशरीचंद जी लूणिया एक विद्या प्रेमी प्रसिद्ध पुरुष जैन में है जिनका सुपुत्र दीपचंद जी के स्मरणार्थ श्रावक के २१ गुणों का वर्णन छाने का उनका विचार होने पर भी नीचली बातें बढाई है।

श्रावकों का १२ व्रत का वर्णन सातवें व्रत के १४ नियम जिसमें लक्ष्मीचंदजी घीया की किताब का आधार लिया है और अंत में आत्मानंद जैन पुस्तक प्रचारक मंडल की पंच प्रतिक्रमण की पुस्तक के अतिचार की प्रतीति की है जिससे श्रावकों को यह पुस्तक बहुत उपयोगी होगी।

इस ग्रंथ का सब खर्चा श्रीयुत केशरीचंदजी लूणिया ने दिया है जिस को चाहिये वह मंगा लेवे।

पता: केशरीचंदजी लूणिया

नया बाजार अजमेर

वांचक वर्गसे प्रार्थना.

प्रमाद बश दृष्टि दोष और प्रेस मैन और प्रेस की गलती से व भाषा की अज्ञानता से जो अशुद्धिऐं रह गई हैं उनमें कितनीक का शुद्धिपत्र दिया है उस शुद्धि पत्रको प्रथम पढ़कर किताब सुधार के पढ़े. और जहां समझ न पड़े वहाँ से पूछ कर पढ़ें.

मुनि माणक लाखन कोटड़ी, अजमेर।

* श्री *

॥ धर्मरत्न प्रकरण ॥

श्रेयांसो भवतां सदाऽभिलषितं कुर्यात्स्व चित्तेधृतो
मान्यो यत् शिव वाञ्छकैर्निशि दिने कारुण्य राशिर्विभुः
तंनत्वा सुगुरुं तथा मुनिवरं पन्यास हर्ष मुदा
कुर्वे रत्न समंगुणा नुकथनं श्राद्धार्थं सौ ख्यावहं ?

जिस पुरुष को भली बुरी वस्तु का ज्ञान है, जो संसार में जन्म मरण व्याधि के संताप से पीड़ित हो, और जिस को कुछ अंश में कोमल भाव प्रकट हुआ हो, ऐसे भव्य जंतु को स्वर्ग मोक्ष के सुख और संपदा देने वाला रत्न समान अमूल्य जैन धर्म आराधन करने योग्य है.

धर्म रत्न को प्राप्त करने में गुरु महाराज के सुबोध की आवश्यकता है. इसलिये परम गुरु श्रीजिनेश्वर ने गणधर भगवंतों द्वारा सिद्धांत सागर में वाक्य रत्नों का ढेर रक्खा है, उससे वर्तमान समय के अनुसार धर्म रत्न प्रकरण नाम का ग्रंथ श्रीशांति स्मरि महाराज ने मागधी गाथा और संस्कृत मागधी टीका कथा के साथ बनाया है. और आत्मानंद जैन सभा भावनगर ने छपवाया है, उस ही का सार लेकर सद्गुरुपन्यास हर्ष मुनिजी की कृपा से हिंदी भाषा में श्रावक के गुणों का कथा के साथ वर्णन करता हूं।

वीर प्रभु जो हमारे शासन नायक हैं उन्हीं से हमें धर्म “रत्नकी” प्राप्ति हुई है और हमारे गुरु भी उन्हीं का ध्यान करते हैं जिसका वीर ऐसा मंत्र सुनते ही पाप और विघ्न सब दूर होजाते हैं उन्हीं का स्मरण कर भव्या त्माओं के हितार्थ मैं उस ग्रंथ का आरंभ करता हूं।

८४ लाख जीव योनि में घूमते २ जीवों को महापुण्य से ही मनुष्य योनि प्राप्त होती है और मनुष्य जन्म में भी जन्म मरण का त्रास दूर करने वाला सुधर्म रत्न प्राप्त होना बहुत मुश्किल है ।

जैसे पुण्य रहित जीवों को चिंतामणी रत्न, कल्प वृक्ष, काम धेनु वगैरह प्राप्त होनी मुश्किल है ऐसे ही निष्पुण्य गुण रहित जीवों को धर्म रत्न की प्राप्ति भी दुर्लभ है,

धर्म रत्न प्राप्त होने के पहिले इतने गुणों की आवश्यकता ज्ञानी भगवंतों ने बताई है सो कहता हूं यद्यपि मुक्ति के लिये साधु का सर्व विरति धर्म श्रेष्ठ है किंतु श्रावक प्रथम सदगृहस्थका देश विरति धर्म को प्राप्त करके साधु धर्म अच्छी तरह पाल सकता है इस लिये प्रथम श्रावक के गुणों का वर्णन करता हूं कि उनको अच्छी तरह समझ कर देश विरति और सर्व विरति धर्मपाल सिद्ध पद पाकर जन्म मरण के बंधन से मुक्त होंवे ।

श्रावक के २१ गुणों के नाम.

(१) अक्षुद्र (२) रूपवान, ३ प्रकृति सौम्य, ४ लोक प्रिय, ५ अक्रूर ६ पाप भीरु, ७ अशठ ८ सुदान्तिष्ठ, ९ लज्जावान, १० दयालु, ११ मध्यस्थ सौम्य दृष्टि, १२ गुणरागी, १३ सत्कथक, १४ सुपक्ष युक्त, १५ सुदीर्घदर्शी, १६ विशेषज्ञ १७ वृद्धानुग, १८ विनीत, १९ कृतज्ञ, २० परोपकारी २१ लब्ध लक्ष्य—इन २१ गुणों का वर्णन करता हूं—

अक्षुद्र (गंभीर, तुच्छता से रहित)

जो क्षुद्र होता है वो तुच्छता से बात बात में झगड़ा करता है, गुरु महाराज उसे कुछ हितके लिये कहें तो वो बिना समझे ही अयोग्य उत्तर देकर गुरु का निन्दक होकर हित शिक्षा प्राप्त नहीं करेगा, बच्चोंको प्रथम बुद्धिका विशेष विकाश न होने के कारण उनको मा बाप वा गुरु की आज्ञानुसार ही बर्तन करना चाहिये.

ऐसेही धर्म रहित जीवों को प्रथम निस्पृही निर्लोभी ज्ञानी पुरुषों के बचन पर विश्वास रखकर धर्म रत्न प्राप्त करना चाहिये इस लिये प्रथम गंभीरता को धारण करने की आवश्यकता है और गुरु महाराज को सम-

भाने में तकलीफ न होवे इस लिये कुछ बुद्धि विकाश की भी आवश्यकता है नहीं तो अज्ञानता से नियम करने वाले एक जड़ बुद्धि की तरह धर्म के बदले अधर्म का भागी होगा ।

एक जड़ बुद्धि ने नियम लिया कि बीमार साधु को औषध देकर पीछे रोटी खाऊंगा, किसी समय पर बीमार साधु न आया तो वो जड़ बुद्धि पश्चात्ताप करने लगा कि मैं कैसा निर्भागी हूं कि आज कोई साधु बीमार नहीं होता ! उस की आंतरिक अभिलाषा दूषित न थी तो भी अज्ञान दशा से साधुओं की बीमारी की उत्पत्ति की चिंतवना से उसकी अभिलाषा दूषित हो गई पापका भागी हुआ और जो उसे कुछ भी बुद्धि का विकाश होता तो ऐसा नियम न लेता और लेता तो ऐसी कुभावना मन में नहीं लाता, इस लिये गंभीरता उसही में है जो कुछ बुद्धि विकाश वाला भी हो ।

यहां पर छोटा दृष्टांत कहता हूं ।

एक युवति छोटी उम्र में धनाढ्य के लड़के को दी गई थी परंतु जब यह कन्या सुसराल को गई तब उस धनाढ्य के धन नहीं रहने से दुःख देखकर पीयर चली गई, बाप ने कुछ न कहा, थोड़े वर्ष बाद उसका पति बुलाने को आया तो वो युवति बाप की शर्म की खातिर सासरे चली परंतु रास्ते में पानी लाने के बहाने पति को कूवे में गिरा कर बाप के घर चली आई, तो भी बाप ने कुछ न कहा, न पूछा, थोड़े रोज बाद पति को फिर आया देख वो धबराने लगी परंतु पति ने इशारे से समझा दी कि मैंने किसी को तेरा कर्त्तव्य नहीं कहा है, तू संतोष से मेरे साथ चल, इस समय युवति की उम्र बढ़ी हो जाने से और लोगों की शर्म से वह पति के साथ चली गई ।

पतिके साथ घर जाकर एक दिन पति से पूछने लगी कि आप कैसे बचे और मेरा इतना अपराध होने पर भी आप मुझे क्यों चाहते हो ? और मेरा विश्वास कैसे करते हो ? पतिने कहा धर्म के प्रभाव से मुझे किसी का भय नहीं है, वो सुनकर युवति उस दिन से पति पर सच्चा प्रेम धरने वाली हो गई, लोगों में उसकी इज्जत बढ़ी, और दोनों के सच्चे प्रेम से घर में लक्ष्मी भी बढ़ने लगी लड़के भी हुए बड़े होने पर उनकी शादी होने से बहुरें भी आई और वे सब स्वर्ग का सुख भोगने लगे ।

एक दिन बाप ने एकांत में बेटों को समझाया कि तुम लोग घर में गंभीरता रख कर सब से मिलकर रहो बात बात में स्त्रियों के साथ मत झगड़ो छोटी उम्र की स्त्रियों में सुशीलता कम होती है, तुच्छता ज्यादा होती है. मैंने जो आज तक सुख पाया है सो झगड़ा नहीं करने का ही फल है, और उसी से आज तुम भी आनंद से राज्य रिद्धि भोग रहे हो ! लड़कों ने पूछा के आपने पूर्व में क्या किया था सो सुनाओ ? कम नसीब से बापने वो बात को जो कोई भी नहीं जानता था सो सब बात उसने लड़कों को सुना दी उस समय छुप कर एक लड़के की बहु ने सब बात सुनली और अपनी क्षुद्रता से मनमें विचारने लगी कि कब सासुजी को यह बात कह कर उसको मेरे वश में लाऊं और सब में प्रधान हो जाऊं इस तरह सासू को दबाने की खातिर रात को एकांत में उसने अपनी सासू को कहा कि आज तक आप मुझे शिक्षा देने के समय चाहे ऐसे बोलती थीं किंतु आज से खयाल रखें कि मैं भी आप की पोल सब जानती हूं सासूने कहा कि मुझे तू कैसे दबाती है घरमें जो सीधी न रहेगी तो तेरे हित के खातिर मुझे कहना भी पड़ेगा बहु बोली ठीक है बोलना, सुसराजी की बात मैं भी प्रकट कर दूंगी इतना सुनते ही सासू चुप हो कर निकल गई और रात में ही आत्म हत्या कर अपनी बात छिपी रखी किंतु सासू के मरने से लोगों में बहु को कलंक लगा और सर्वत्र सासू हत्यारी प्रसिद्ध हुई इस दृष्टांत से प्रत्येक पुरुष या स्त्री को शिक्षा लेने की है कि मार्मिक बात किसी को न कहेनी चाहिये.

पतिने गंभीरता से सुख पाया और तुच्छ बहूने मार्मिक वचन कह कर सासू की हत्या कराई इस लिये सब के साथ गंभीरता रख कर दीर्घ दृष्टि पहुंचा कर बोलना चाहिये ।

लोकोत्तर दृष्टांत.

चेदि देश में श्रुति मति पुरी में क्षीरकंदंबक नाम का वेदपाठी एक सुशील ब्राह्मण लड़कों को पढ़ाता था, राज पुत्र वसु तथा उस ब्राह्मण का पुत्र पर्वत और नारद तीनों सब विद्यार्थियों में बड़े और उपाध्याय को प्रिय थे, मुनिओं ने पंडित के घर पर गोचरी आने के समय परस्पर वार्त्ता की कि इन तीन विद्यार्थियों में दो नरक गामी हैं, एक सद्गति में जाने वाला

है साधुओं के वचन सुनकर और विश्वास करके परीक्षा की खातिर क्षीरक दंबक ने उनको कृत्रिम बकरा बना कर दिया और कोई न देखे वहां जाकर मारने को कहा, जो नारद दीर्घ दृष्टिवाला था उसने एकांत में जाकर उसे मारने का विचार किया, किंतु विचार करने लगा कि ज्ञानी, तारे वा देवता सबको सर्वत्र देखते हैं, मैं भी देखता हूं इससे तो गुरुका अभिप्राय बकरे को नहीं मारने का है, गुरु के पास जाकर उसने सब बात सुनाई गुरु ने विचारा कि यह सुगति में जावेगा राज पुत्र का तो नरक में जानेका संभव है किंतु मेरा पुत्र नरक में कैसे जावेगा ?

ऐसा विचार कर अपने पुत्र को बुलाकर बैसाही बकरा मारने को कहा वो विचारा कम अकल था, जाकर मार आया पिता ने पूछा, कैसे मार आया ? क्या वहां देव नहीं देखतेथे अथवा तू नहीं देखता था ? तब बोला, मेरी ऐसी बुद्धि कहां से होवे, गुरु ने सोचा कि अज्ञानता से यह अर्थ का अनर्थ कर नरक में जावेगा ऐसा ही वसु का मालूम हुआ, उपाध्याय को संसार से खेद हुआ दीक्षा लेकर सद्गति को प्राप्त हुआ.

पर्वत पीछे उपाध्याय हुआ तो भी अर्थ का अनर्थ करने लगा, नारद जो पढ़कर चला गया था वो एक दिन पर्वत मित्र से मिलने को आया और जिस समय पर्वत ने छात्रों को पाठ दिया उस समय आजका अर्थ यज्ञ में पुराणी व्रीहि अनाज के बदले बकरे का अर्थ किया, तब नारद ने समझाया परंतु वो मंद बुद्धि था और अधिक गुस्से वाला भी था जिससे अपना अपमान समझ भगड़ा करने लगा, और दोनों ने निश्चय किया कि वसु राजा जो अपने साथ पढ़ता था और सत्यवादी होने से अधर बैठता है उसके वचन पर विश्वास करना, पर्वत की मा ने सुना तब उसको सच्चा अर्थ मालूम होने से पर्वत को उसने कहा कि ऐसी आपस में हठ क्यों करते हो ? मित्र भाव से जो मित्र मिलने आया है उससे भगड़ा नहीं करना चाहिये, पर्वत बोला, मेरा इसने अपमान किया है इसलिये मैंने इसके साथ प्रण किया है कि जो झूठा हो उसकी जीभ काटी जावे, मा सुनकर चमक गई एकांत में बैठे को बुलाकर कहा मंद भाग्य पुत्र ? इतना झूठा घमंड कर अपना क्यों

नाश करता है, मुझे भी याद है कि एक समय तेरे पिता ने अज का अर्थ पुराणे ब्रीहि अनाज ही किया था, इसलिये नारद के पास क्षत्रा मांगले, पण्टु हठी पर्वत नहीं मानता था, जिससे पुत्र की रक्षा की खातिर माता ने एकांत में जाकर वसु राजा को समझाया और गुरु पुत्र की जीभ बचाने को कहा वसु बचनमें आगया राज्य सभामें पर्वत और नारदने आकर अपनी बात सुनाकर न्याय चाहा तब वसुने झूठाही कह दिया कि अजका अर्थ बकरा कहा था नजदीक में जो रहे हुए देव थे उनको यह बात अच्छी न लगने से उन्होंने उस वसु राजा को जमीन पर गिरा कर मार डाला, नारद की जय हुई । पर्वतका लोगों ने बहुत तिरस्कार किया वहां से निकल कर वो मांस भक्षण के स्वादु ब्राह्मणों को मिलकर पवित्र बेदों में हिंसामय स्मृतियों बढ़ाकर हजारों जीवों की हिंसा का रास्ता बताकर नर्क में गया।

इस दृष्टांत से यह हित शिक्षा दी है कि जो मंद बुद्धि हैं वे आप सत्य बात जो गंभीर आशय की है वो नहीं समझ सके और अपनी अज्ञानता से अर्थ का अनर्थ कर भोले जीवों को फंसाकर दुर्गति में जाते हैं, इसलिये धर्म योग्य पुरुष गंभीर और तीक्ष्ण बुद्धि वाला समयज्ञ होना चाहिये, यह श्रावक का प्रथम गुण है

श्रावक का दूसरा गुण.

पुरुष वा स्त्री रूपवान् होना चाहिये अर्थात् शरीर के अंग उपांग संपूर्ण होना चाहिये, पांच इंद्रिय पूरी होना चाहिये शरीर बंधारण यथा योग्य सुंदर होना चाहिये ऐसा पुरुष धर्म पाकर अनेक जीवों का तारने वाला प्रभाविक हो सकता है । यदि कदापि कोई कुरूप हो वो विकलांग वा विकल इंद्रिय वाला हो तो भी धर्म तो पा सके किंतु साधु पना नहीं पा सके अथवा कुरूप होवे तो उन्नति नहीं कर सकता, लोगों में प्रभाव नहीं पड़ता, अथवा शठ पुरुष उसकी हांसी कर धर्म की निंदा करेंगे, अथवा खुद साधु गुस्से होकर टंटा करके जैन धर्म की हीलना करावेगा और बज्र ऋषभ नाराच संघयण बिना मुक्ति भी नहीं हो सकती ।

यहां पर कुरूप संबंधी हरि केशी मुनि का दृष्टांत देकर कोई शंका करेगा कि वे रूपवान् नहीं थे तो भी वे पूजनीक क्यों हुए ? उसका समाधान

यह है कि सर्वत्र देवता सहायक नहीं होता, और उनकी चारित्र्य वृत्ति क्षमा गुण अति प्रशंसनीय था, इस लिये ऐसे गुणवाले तो बिना रूप भी स्व पर को तार सकते हैं और ज्ञानी गुरु कुरूप को भी धर्म देते हैं परंतु विकलांग लंगड़ा, अंधा, रोगी, अशक्त चाहे तो भी संपूर्ण धर्म नहीं पा सका, जैसे उत्तम फल का पेड़ चाहिये तो बीज उत्तम जमीन में ही बोना चाहिये

तीर्थ कर चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव वगैरह माननीय पुरुष जन्म से ही अधिक रूपवान् ही होते, हैं ऐसे ही धर्म प्रभावक पुरुष आचार्य वा साधु वा श्रावक भी जन्म से ही सुंदर होते हैं गुरुके पास जाते ही वे अपनी मुख मुद्रा से गुरु को प्रसन्न कर देते हैं ।

यथा रूपं तथा गुणाः

रूप भी एक पुण्य प्रकृति है और पुण्यवान् ही धर्म पा सकता है किसी ने पूर्व भव में रूप का मद किया हो और पीछे पश्चत्ताप किया हो वो ही कुरूप में दूसरे भव में धर्म पा सकता है इसलिये रूप का मद नहीं करना किंतु रूप भी धर्म साधन में सहायक होवे तो अति प्रशंसनीय है ।

वज्र स्वामी का चरित्र.

वज्र स्वामी बड़े रूपवान् थे उन्होंने ने दीक्षा ली और जहां बिहार करके जाते थे वहां ही उनकी महिमा होती थी एक कन्या तो साध्वियों के पास उनके गुणों की प्रशंसा सुनकर प्रतिज्ञा कर बैठी कि उनके साथ ही विवाह करूंगी वो लड़की बड़ी हो जाने से और वज्र स्वामी का पता न लगने से बाप ने उसे समझाया कि बेटी ऐसी हठ करना तुझे योग्य नहीं युवति के युवावस्था में बाप के घर रहने से इज्जत घटती है किसीके साथ शादी करले ! पुत्री ने कहा हे तात ! ऐसा नहीं हो सका कि मैं वज्र स्वामी को छोड़ दूसरे से शादी करूं कर्म संबंध से वज्र स्वामी आगये बाप ने कन्या और करोड़ों का द्रव्य ले जाकर उनसे कहा हे वज्र स्वामी ! जगत में पुण्य वृत्त के फल उसी भव में खाने वाले आप ही जगत पूज्य अद्वितीय पुरुष हैं कि देव कन्या और लक्ष्मी देने को मैं आया हूं आप शीघ्र स्वीकार करें वज्र स्वामी ने स्थिर चित्त से कन्या और उसके पिता को संसार की असारता समझा

कर कहा कि हे महा भाग ! जो संसार की असारता और भोगों की रूप की क्षण भंगुरता नहीं समझते वही देवांगना वा स्वर्ग की वांछा करते हैं किंतु जिसे ज्ञान है वे ऐसे फंदों में नहीं पड़ते उनके अथाग रूप और तेज-स्वी कांति देख कर प्रथम से ही शांत हो गया था और जब ऐसे शांति प्रिय मधुर वचन सुने तब तात और कन्या दोनों ने कहा तब हमारे क्या करना ब्रज स्वामी ने कन्या को दीक्षा देकर उसी धन से उसका दीक्षा महोत्सव कराया !

ऐसे ही अनाथी मुनि से श्रेणिक राजा ने बोध पाया और समय सुंदर जी महाराज ने जो सज्जाय बनाई है वो ही यहां पर लिख देते हैं।

श्रेणिक रयबाड़ी चडयो, पेग्वीयो मुनि एकांत; वरकांत रूप मोहियो, राय पूछे कहीने वृतांत, श्रेणिक राय हूरे अनाथी नि ग्रंथ । तिणमें लीघोरे साधुजी को पंथ श्रे— १

वसंत ऋतुमें जिसवक्त राजा श्रेणिक राज ग्रही नगरी के उद्यान में फिरने को गया था उस समय युवतियों के मन के मनोरथ पूर्ण करने वाला एक अतीव रूपवान् देव कुमार जैसा युवक को देख कर राजा को अत्यंत आश्चर्य हुआ कि अहो कैसा सौभाग्यवान् सुंदर कुमार है परंतु वो इतना सुंदर होने पर भी साधु क्यों हो गया है । साधु तो वह ही होता है जो सब बात से दुखी हो ! ऐसा विचार कर राजा वहां जाकर बोला कि आप कौन हैं और साधु क्यों हो गये हैं ! ऐसी युवावस्था में ऐसे वन में तो युवतियों के साथ युवक ही क्रीड़ा करने को वसंत ऋतु में आते हैं

मुनि ने कहा— मैं अनाथ हूं मेरा कोई रक्षक नहीं है इस लिये साधु हुआ हूं ।

राजा—यदि आप को ऐसा ही दुःख से साधु होना पड़ा है तो मैं आप का नाथ होकर आश्रय देने को तैयार हूं ।

मुनि—आप स्वयं अनाथ हैं, मेरे नाथ कैसे होंगे ।

राजा को गुस्सा आया कि वो मुझे अनाथ कहकर क्यों अपमान करता है ? मैं कैसे अनाथ हूं ? और प्रकट बोला कि-हे मुने ! साधुको ऐसा उचित नहीं

है कि असत्य वचन बोल कर दूसरों का अपमान करे ? मुनि ने कहा, हे नरेन्द्र । जरा धैर्य रखो, आप उस वचन का परमार्थ नहीं समझे ?

जिसको पर लोक का ज्ञान नहीं पुण्य पाप मालूम नहीं वो अनाथ है क्योंकि इस भव में पूर्व के पुण्य से सुख भोग कर जन्म हार जाता है और दुर्गति के दुःख अनाथ होकर भोगेगा परंतु यहां पर भी पूर्व के पापों के उदय से कष्ट भोगना पड़ता है ।

श्रेणिक आप को भी कष्ट पड़ा है ?

मुनि—मेरा चरित्र थोड़ा सा सुनो—

इस केसंबी नगरी वसे, मुझ पिता परिगलधन, पुरिवार पुरे परिवर्यो
हू छूं तेहनो पुत्र रतन ! श्रे—२

एक दिन मुझ बेदना, उपजी ते न खमाय ।

मात पिता झूरी मरे, पण किणे समाधिन थाय, ३ श्रे ॥

बहु राज्य वैद्य बोलाविया, किधा कोडी उपाय ।

बावना चंदन चरचीयां, पण किणे समाधिन थाय श्रे, ४ ॥

गोरडी गुणमणी औरडी, चोरडी अबला नार ।

कोरडी पीडा में सही, कोने कीधी न मोरडी सार श्रे, ५ ॥

मैं कोसंबी नगरी में रहने वाला नगर श्रेष्ठ का पुत्र हूं, और राज्य रिद्धि और परिवार से स्वर्ग का सुख वहां भोग रहा था, और रात दिन किस तरह जाते हैं वो भी मालूम न था ।

एक दिन शरीर में शूल का रोग हुआ अग्नि ज्वाला की तरह शरीर भीतर में जलने लगा, तब मैंने पुकार करना शुरू किया, मात पिता भी रोने लगे, बड़े बड़े राज्य वैद्य आकर बावना चंदन से लेप करने लगे, मेरी औरत जो रूप सुंदरी थी वो भी रोने लगी किंतु मेरी पीडा किसीने न ली, न कोई सहायक हुए, न मुझे समाधि हुई इसलिये मैं अनाथ होगया था और मेरा नाम मैंने अनाथी रक्खा ।

जग मेंको केनो नहीं, तेभणी हूरे अनाथ ।

बीत रागना धर्म सारीखो, नहीं कोई बीजो मुक्किनो साथ, ६ श्रे—॥

वेदना जो मुझ उपशमै, 'तो लेउं संजम भार ।

एम कहेतां वेदन गई, मैं प्रतलीधुं हर्ष अपार श्रे, ७ ॥

हे भूपते ! आप भी समझे होंगे कि मैं अनाथ कैसे होगया. और रोगों से वा दुःस्व से बचाने वाला कौन है ? इसलिये मैंने मन में धर्म का शरण लिया कि यदि जो रोग मिटे तो साधु हो जाऊं ! इतना विचार से ही शांति होने लगी और मैं साधु हुआ हूं ।

कर जोड़ी राजा गुणस्तवे, धन धन मुनि अण्णगार ।

श्रेणिक समकीत पामीयों, वांदी पहाँतो नगर मझार श्रे, ८ ॥

मुनि अनाथी गावतां, टूटे कर्मनी क्रोड ।

गणि समय सुंदर एहना, पाय वांदिरे बेकर जोड ॥ श्रे ९ ॥

मुनिकी बात सुनकर धर्म बोध पाकर हाथजोड़ राजा श्रेणिक शहरमें आया समय सुंदर कहते हैं कि ऐसे मुनि के गुण गाने से करोड़ों कष्ट दूर होते हैं, मैं भी उनके दोनों चरण में नमस्कार करता हूं ।

इसलिये साधु रूपवान् स्वपर का अधिक उपकारक है.

श्रावक का तीसरा गुण ।

प्रकृति से सौम्य दृष्टि (शांति प्रकृति)

जो पुण्यात्मा इस लोक में जन्म से ही शांति मुद्रा वाला होता है वो अपने आत्मा को बार बार क्रोध से नहीं जलाता न दूसरों को सताने की इच्छा करता, इस लिये वो जहाँ जाता है वहाँ दूसरों को शांति देकर आप भी अंत में प्रशंसनीय हो जाता है ।

अंगर्षि का दृष्टांत ।

बंषा नगरी में अंगर्षि और रुद्रक दोनों विद्यार्थी कौशिक आचार्य के पास विद्या पढ़ते थे रुद्रक स्वभाव से क्रोधी कपटी प्रमादी था. और अंगर्षि सरल शांत सर्वदा अप्रमादी था. जिससे गुरु दोनों के गुणानुसार उनकी इज्जत करता था अंगर्षि की प्रशंसा सुनकर रोज रुद्रक जलता था, और रोज उसके छिद्र दूँडता था, एक दिन दोनों लकड़ी लेने को जंगल में गये,

परंतु रुद्रक तो रास्तेमें खेलनेको लग गया, और अपना कर्त्तव्य भी भूल गया दूसरा लकड़ी लेकर दुपहर को उसी रास्ते आया जहां रुद्रक खेल रहा था

रुद्रक उसको दूर से देख कर घबराया, और लकड़ी लाने को चला रास्ते में एक बुढ़ी स्त्री को देखी जो अपने छोटे बच्चे को नदी के किनारे पर शीतल हवा में बैठा कर रोटी खिला रही थी, पास में एक लकड़ी की भारी भी पड़ी थी जिस को वो बिचारी प्रातःकाल से अटवी (जंगल) में जाकर बड़े परिश्रम से ले आई थी, पड़ा हुआ मुफ्त का माल देख कर रुद्रक वहां शीघ्र जाकर, और वहां किसी को न देख कर, उस बिचारी बुढ़िया को मार डाली, और उस के बच्चे को रोते हुये वहीं छोड़ लकड़ी का भारा उठा कर तेजी से चला, और दूसरे रास्ते से निकल कर गुरु के पास जाकर बोला हे गुरुजी ! आपके माननीय छात्रके कर्त्तव्य सुनो, जिसकी आप रोज प्रशंसा करते हो ! मैं तो प्रभात में ही बन में जाकर इतना श्रम करके लकड़ी ले आया हूं; आप का प्रिय छात्र दोपहर तक तो खेलता रहा और जब मुझे लकड़ी का बोझा लाते देखा तब वो घबराया, और तब वो अटवी (जंगल) में जाने लगा, रास्ते में एक रंक (गरीब) वृद्ध स्त्री को मार उस की लकड़ी का बोझा उठा कर अब धीरे धीरे चला आ रहा है, और कम नसीब बुढ़िया का लड़का वहीं रो रहा है। उन की बातें हो ही रही थी कि अंगर्षि आ पहुंचा। उपाध्याय ने क्रोधित हो कर उस से कहा, हे दुष्ट ! तेरा काला मुंह कर यहां से चला जा। बिना कारण ऐसा कठोर वचन गुरु के मुंह से सुन कर वो रोने लगा क्योंकि गुरु के सिवाय वहां पर उस का कोई भी रक्षक न था, वह दूर देश से पढ़ने को आया था, तो भी गुरु को दया नहीं आई, और वह अंगर्षि रोता २ चला, उस की प्रकृति सौम्य होने से उस ने किसी का दोष नहीं निकाला परन्तु गांव के बाहिर दरवाजे से थोड़ी दूर जाकर वृक्ष की छाया में बैठ कर बिचारने लगा। अहा ! चन्द्र की किरणों से अग्नि निकले ऐसे शांत गुरु के मुख से कठोर वचन निकले हैं, मेरा कुछ भी अपराध हुआ होवेगा, जिसे मैं नहीं जानता हूं; अहा ! ऐसे शांत गुरु को क्रोधी बनाने वाले मुझ को धिक्कार है। धन्य है ! ऐसे शिष्यों को कि जिन्होंने अच्छे कर्त्तव्य से अपने गुरु को प्रसन्न किये हैं। धन्य है उन्होंने को ! ओ

किसी जीव को कष्ट नहीं पहुंचाते । इस तरह पर गुणरागी और अपने दोषों की निन्दा करने वाले अंगर्षि का शुद्ध भाव बढ़ने लगा, आत्मा में अपूर्व शांति होने लगी मोहनीय कर्म क्षय होने लगा, विशुद्ध भाव बढ़ते बढ़ते क्षणिक श्रेणी में आरूढ़ होकर केवल ज्ञान को अन्तर मुहूर्त में प्राप्त कर सर्वज्ञ सर्वदर्शी हुये, और देवों के आसन कं पायमान हुये और वे अवधि ज्ञान से देख कर अंग ऋषि की महिमा करने को आये देव, दुं दुं भी आकाश में बजने लगी, और नगर में आवाज होने लगी कि हे मनुष्यों सुनो ! रुद्रक छात्र ने छोटे बच्चे की माता को मार कर उस की हत्या का पाप अंगर्षि के ऊपर डाला है, इस लिये उस पापी से आप का बोलने का भी धर्म नहीं है । ऐसी आकाश बानी और मधुर ध्वनी सुन हजारों लोग गांव के बाहिर यह आश्चर्य देखने को आये, और वह उपाध्याय भी आया और उसने अपने छात्र को झूठा कलंक दिया था जिसकी उसके पास क्षमा मांगी और उस छात्र से जैन धर्म को प्राप्त किया, और लोगों से अत्यंत तिरस्कार पाकर रुद्रक भी अंगर्षि से क्षमा मांगने को आया, और आज तक किये हुये पापों की सच्चे भाव से क्षमामांगकर पश्चात्ताप करने लगा, जिससे उसके सब पाप दूरहोने पर उसको भी केवल ज्ञान प्राप्त हुआ इस दृष्टांत से ऋषि अंगर्षि की तरह मनुष्य प्रकृति सौम्य होना चाहिये ।

॥ लोक प्रियता ॥

श्रावक को प्रथम तो लोक प्रियता प्राप्त करनी, और अपने कर्त्तव्य से दूसरों को लाभ पहुंचाना चाहिये । रास्ते में चलते कोई भी बड़ा वा छोटा मनुष्य मिले तो उससे मधुर वचन से बोलना, अपने घर आवे तो आसन देना, उठके सामने जाना, खाने पीने की खातिर करना चाहिये ऐसे कृत्यों से सब प्रसन्न होते हैं; और जो दुराचारी, कुव्यसनी, बदमाश होता है, उससे सब लोग नाराज होते हैं, किसीकी बिना अपराध झूठी निन्दा करना झूठा कलंक देना ऐसा श्रावक का कर्त्तव्य नहीं है, और पर लोक विरुद्ध कार्य यह है कि जिसमें त्रसकाय को अधिक पीडा हो, राज्य लोभ से रंक (गरीब) लोगों को लूटना या सताना, पक्षियों को वा निर्दोषी जीवों को अपने शौख की खातिर दुःख देना, मारना, परस्पर लड़ाना, ऐसे अनर्थ बंड के सब कृत्य परलोक

विरुद्ध है, ऐसे कृत्य श्रावक को छोड़ कर दूसरों को सुख देने वाले कार्य करना चाहिये किन्तु ये सात व्यसन तो दोनों लोक विरुद्ध होने से छोड़ने ही चाहिये ।

पूतचमांसं च सुराच वेश्या । पापाग्धि चौर्यं पर दार सेवा ॥

एतानि सप्तव्यसनानि लोके । पापाग्धि के पुंसि सदा भवन्ति ॥ १ ॥

जुआ, मांस, मदिरा, वेश्या गमन, शिकार, चोरी, और पर स्त्री गमन ये सात बातें अधिकतर पापी पुरुष में होती हैं ऐसे पाप छोड़ लोक प्रियता के कारण दान, विनय शील में दृढ़ होना चाहिये ।

दानेन सत्त्वानि वशी भवन्ति । दानेन वैराग्यपि यान्तिनाशम् ॥

परोपि बंधुत्व मुपैति दानात् । तस्माद्दि दानं सततं प्रदेयम् ॥

दान से प्राणी वश होते हैं, दान से वैराग्य होता है दान से दूसरे जन भी बन्धुओं की तरह कर्तव्य करते हैं, इसलिये योग्यतानुसार दान जीवों को अवश्य देना चाहिये, जिससे, आप धर्म पाकर दूसरे जीवों को भी धर्म का भागी बनाता है ।

॥ सुजात कुमार की कथा ॥

चंपा नगरी में एक मित्र प्रभ नामका राजा था, और वहीं एक धन मित्र नगर सेठ था, और उसकी भार्या धनाश्री थी इनके एक बड़ा तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुवा, लोगों ने वा स्त्रियों ने उसे जन्म से ही प्रसन्न होकर "सुजात" सुजात कह कर बुलाते थे इसलिये उसके मा बापों ने भी उसका सुजात ही नाम रखवा सुजात कुमार शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की तरह बढ़ने लगा जब जवाने हुवा तब भी कुचाल न चलकर अच्छे भले समान वय के लड़कों को साथ लेकर परोपकार करने लगा, भगवान् के मंदिर में सब के साथ जाकर बीतराग के गुण गाने लगा और अपने अंगसे, कंठ से, धनसे पूजा सेवा करके आत्मा को पवित्र करने लगा, कभी २ धर्माचार्य के पास जाकर तत्त्व ज्ञान की धर्म कथायें सुनता कभी २ एकांत में बैठ कर धर्म चिंतवना करता, बाप से स्वर्च के लिये रुपये पैसे लेता उससेभी वह सुजात कुमार अनेक गरीबों का कष्ट निवारण करता था इससे सर्वत्र उसकी महिमा होने लगी परन्तु वह तो

यही कहा करता था कि यह सब जैन धर्मका प्रताप हैं ! इससे उसके अनुयायी होकर अनेक पुरुष जैन धर्म से राजी होकर देव मंदिर में जाना, गुरु सेवा करना, परोपकार करना, वगैरे उत्तम कार्यों में तत्पर हुये, सर्वत्र उसी की प्रशंसा लोगों के मुँह से निकलने लगी, उस नगर में धर्म घोष मंत्री की भार्या प्रियंगु नाम की थी उसने दासियों के द्वारा उसकी प्रशंसा सुनकर उनको कह दिया कि जिस समय सुजात को रास्ते में देखो. उस समय मुझे खबर देना एक समय पर सुजात के उधर से आने पर दासीओं ने उस सुजातको प्रियंगु को बताया; उसने और परिवार ने सुजात को देख कर और उस की रहनी करनी से सन्तुष्ट होकर सब परिवार सुजातकी प्रशंसा करने लगा जब मंत्री घरमें आया तब सब के मुख से सुजात की बातें सुनकर मंत्री ने मन में सोचा कि उस दुष्ट सुजात ने आकर मेरे घर में भी कुचाल की है! तो उसका उपाय अवश्य करना चाहिये यह सोचकर मंत्री ने राजा को एक अज्ञान मनुष्य के साथ एक ऐसी चिट्ठी भिजवाई जिसके पढ़ने से राजा के मन में ऐसा खयाल आया कि सुजात राजद्रोही है, परन्तु अपने शहर में उसको मारने से तो फि-साद पैदा होवेगा ऐसा विचार करके उसने विदेश का कार्य प्रसंग निकाल कर सुजात को भेज दिया और साथ में पत्र दिया जिसमें लिख दिया था कि अवसर आने पर मार डालना सुजात उस पत्र को लेकर विदेश चला गया और वहां जाकर राजा को पत्र दिया; परन्तु वहां जो हाकिम था वो बड़ा दयालु था उसने एकांत में सुजात को ले जाकर कहा कि तेरी मृत्यु समीप है परन्तु मैं एक शर्त पर तुझे बचाऊं यदि तू मेरी भगनी के साथ शादी करे, कर्म के फल बिना भोगे नहीं छूटते यह कर्षफल मान सुजात ने मंजूर किया और शादी होगई, उसकी पत्नी के कोढ़ का रोग था तो भी सुजात ने पति धर्म पाल कर उसपत्नी की सेवा अच्छी तरह से कर समाधि से उसको धर्म रक्त बनादी, इसकी पत्नी ने मरने के समय तक शुभ कामना कायम रखी जिससे स्त्री मर कर स्वर्ग में देव हुई और स्वर्ग से आकर अपना उषमारी जो सुजात था उसे हाथ जोड़ कर कहने लगा कि,

हे नाथ ! आप की इच्छा क्या है सोही मैं करूं ! सुजातने कहा कि मेरा बल्लक मिट जावे और मैं इज्जत से बाप से मिलूं तो फिर दीक्षा लेऊंगा । देवता ने मित्र प्रभ राजा के नगर में जाकर उसके शहर का नाश करने

को आकाश में एक बड़ी शिला तैयार की राजा ने उपद्रव देख हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि नगर का नाश न होवे, देवता ने कहा कि जो सुजात निर्दोष है और तूने झूठा कलंक देकर निकाला है अगर तू उसे पीछा बुला कर उसकी इज्जत करेगा तो सब बचेंगे, राजा ने शीघ्र बुलाने का प्रबन्ध किया सुजात को देवता ने उद्यान में लाकर रक्खा, और राजा ने उसे बड़ी इज्जत से घर को पहुंचाया, माता पिता का दर्शन करके थोड़े रोज बाद ही सुजात ने जैन धर्म की महिमा बढ़ा कर दीक्षा ली, और सुगति में गया इस लिये लोक प्रिय होना प्रत्येक श्रावक श्राविका का धर्म पाने में अनमोल गुण है ।

(५) अक्ररता पंचम गुण ।

क्रूर पुरुषको क्रोध ज्यादा होता है मानभी अधिक होता है, दूसरों के छिद्र शोधकर गुणीको भी दोषी बनाकर अपने आप धर्म प्राप्ति नहीं कर सकता है; इस लिये सुगुरुभी उसे धर्म नहीं बताते हैं, और गुरु महाराज दयासागर होकर बतावेंतो वो अच्छी तरहसे नहीं समझसक्ता और समझे तोभी अपनी अशांतिसे उसका अनुष्ठान विधि अनुसार नहीं करता है कदाचित् धर्मका अनुष्ठान विधि पूर्वक करभी लेवें तोभी अपनी अभ्यन्तर शांति बिना उसे समाधि नहीं मिलती और बिना समाधि के वह मोक्ष प्राप्त नहीं कर सक्ता इस लिये श्रावक धर्म पालने वालों में अक्ररता का गुण होना चाहिये ।

दृष्टान्तः—एक ब्राह्मण कार्य प्रसंगात् गाड़ी लेकर माल लेने को दूसरे गांव में गया, रास्ते में रेतीली नदियें आती थीं ब्राह्मण ने बैलों की शक्ति बिना बिचारे ही एक दम बहुत सा माल भर लिया और लौटा, रास्ते में थोड़ी रेती वाली नदी में तो बैल पार कर गये परंतु घुटनुं रेती वाली नदी में बैल थक गये, ब्राह्मण ने बैलोंको मारना शुरू किया, बहुत मारने से भी बैल न बड़े, और मारने से उनके शरीर में लोहू की धाराएं चलने लगी, और वह ब्राह्मण भी थक गया, लेकिन प्राण बैलों के निकले वहां तक उसने मारे, पीछे घर को गया तब घर वालों ने उसे पूछा कि आज इतनी देरी क्यों हुई ? वो क्रोध में बोला कि बैलों ने मुझे बहुत सताया है । मेरा माल खा

कर मुझे ही दगा दिया है, घर वालों से सब बात सुनाई और पीछे कहने लगा कि अब कसाइयों को ले जाकर इनकी चमड़ी उतगाऊंगा, घर वालों ने उसका ऐसा दुष्ट स्वभाव जान कर घर वाले सब चमक गये और उन्होंने ने विचार कि कोई दिन हमारी भी ऐसी ही दशा करेगा, इस लिये उन्होंने जाति के लोगोंको बुला कर सब बात जाहिर करदी, जाति वालों ने ब्राह्मण की जगह चांडाल समझ कर जाति से बाहिर कर दिया । इस लिये क्रोधी, क्रूर पुरुष को धर्म की प्राप्ति होनी दुर्लभ है कितने ही जन घर में दूसरों को बात ही बातमें सताते रहते हैं और घरवाले उसकी मृत्यु चाहते हैं कि कब इस पापी से हमारी मुक्ति होवे ऐसा विचार पामर कहां से धर्म पा सके ? कितने ही साधु पणों में भी अत्यंत क्रोधी होकर झगड़े करते फिरते हैं और गुरुजी प्रश्नात्ताप करते हैं कि ऐसे दुष्ट को दीक्षा देकर सिर्फ कर्म बंधन ही सिर पर लिया है इस लिये प्रत्येक पुरुष को क्रूरता छोड़नी चाहिये । अभ्यास से ही आदत सुधर सकती है ।

(६) पाप भीरुता श्रावक का छठा गुण है ।

इस लोक में राज्य दंड और लोकापवाद को प्रत्यक्ष देख कर परलोक में पापों की शिक्षा अवश्य होवेगी ऐसा विचार ने वाला, श्रद्धालु पापभीरु पुरुष ही धर्म पा सकता है और विवेक से विचार कर प्रत्येक कार्य करता है जिस से वह धर्म की अच्छी तरह से आराधना का और सुगति का भागी हो सकता है ।

राजा श्रेणिक मगध देश में राज्य करता था उस समय राज ग्रही नगरी में काल सुरीक नाम का एक कसाई हजारों जीवों की हत्या कर धन बढ़ाता था किन्तु साथ साथ सातवी नार की में जाने के लिये पाप पुंज की ग-ठड़ी बांध रहा था, मरने के थोड़े समय पहिले उसके अनेक रोग हुये, और अग्नी में जलने की तरह उसके शरीर में पीड़ा होने लगी, उस कसाई का लड़का सुलस पूर्व पुण्य से सुशील और दयालु था, जिससे बाप के दुष्ट कृत्यों से घृणा करता था तो भी उस बाप की अंतिम अवस्था में समाधी होवे इस लिये सुलस ने अनेक शांति के उपाय किये किन्तु बाप के पाप के उदय से उन उपायों से अधिक से अधिक पीड़ा हुई जिससे लड़का घबराया और

और उसने अपना मित्र जो अभय कुमार नाम का राज पुत्र था और बड़ा मंत्री था उससे पूछा कि अब मैं क्या करूं ? लड़के की बात सुनकर अभय कुमार ने कहा कि तेरे बाप ने जो पाप किये हैं उसका कुछ फल यहां भोग रहा है उसे चंदन के लेप से शान्ति नहीं होवेगी, किन्तु जो दुर्गंधि का लेप करे तो शान्ति होवे, बेटे ने बाप की बिना इच्छा के ही शान्ति के लिये अशुचि पदार्थ का लेप कराया, इससे बाप को कुछ शान्ति हुई, तब वो शान्ति से मरा, और अपने कृत्यों का फल भोगने को नर्क में गया. सुलस कुमार ने बाप का धन्धा छोड़ दिया और दूसरा धन्धा करने लगा, रिस्तेदारों ने उसे समझाया कि बाप का धन्धा मत छोड़ उसने कहा कि पाप का फल कौन भोगेगा ? लोगों ने कहा अपन सब बांट लेवेंगे । यह सुनकर सुलस ने अपने पैर पर कुहाड़ा मार कर घाव कर लिया और जोर से बोला आके भाइयों मेरा दुःख बंटालो ! किसी ने दुःख नहीं लिया और बोले कि हम चाहते हैं कि बांटले परन्तु लेने का कोई उपाय नहीं है, तब सुलस ने कहा कि यहां देखते हुये भी दुःख नहीं ले सके तो परलोक में लेने को कैसे आवोगे ! ऐसा कह कर उस सुलस कुमार ने वीर प्रभु के पास जाकर जैन धर्म पाकर श्रावक के व्रतों को लेकर निर्दोष जीवन वृत्ति को निर्वाह करके वो स्वर्ग का भागी बना । बाप बेटों और रिस्तेदारों के दृष्टांत से आप लोगों को खयाल रहे कि धर्म पालने से पहिले इस पाप भीरुता गुण को प्राप्त करो ।

॥ सातवां अशठता ॥

अशठ पुरुष निर्मल स्वभाव का होता है वो किसी को ठगता नहीं जिससे लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और उसके वचन पर विश्वास करते हैं, और जो कपटी शठ होता है वो कोई दिन अपराध न करे तो भी उसकी रोज की बुरी आदत से लोग उससे डर कर उसका विश्वास नहीं करते, जैसे कोई को सर्प न काटे तो भी सर्प के काटने के स्वभाव से ही उससे डरते हैं कपटी ऊपर से मीठा भी बोले तो भी सब डर कर उससे दूर भागते हैं हंसी ठट्ठा समझ कर उसका विश्वास नहीं करते, गुरु महाराज भी उसको व्रत पचाना नहीं डरते हैं, इस लिये ऊपर से भी उचित वचन बोले औ

भीतर भी को निष्कपटी होवे वो तो धर्म रत्न का भागी हो सकता है कहा है कि दूसरों को मीठी बातों से रंजन कर, ऐसा सीधे चलने वाले विरले ही मिलेंगे ।

एक प्रधान और राजा सच्चे गुरु की शोध में फिरते २ एक उद्यान में पहुंचे वहाँ एक मौन धारी दिगम्बर परिब्राजक बैठा था जिसके समीप में रक्षा के ढेर के सिवाय कुछ भी नहीं था और उसकी आसन की स्थिरता देख दोनों प्रसन्न होकर नमस्कार कर धर्म सुनने की इच्छा से बैठ गये, परन्तु त्यागी ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया न बात की, तब राजा को अधिक भाव हुआ और प्रधान से पूछा कि इन्हें क्या देवें वा ऐसे महात्माओं की किस प्रकार सेवा करें ! प्रधान को उस परिब्राजक की स्थिति कुछ मालूम हो जाने से उत्तर दिया कि हे भूपते ! आपका कहना सच है कि ऐसे उत्तम पुरुषों की योग्य पर्युपासना करनी ही चाहिये ! परन्तु वे मुंह से नहीं बोलते, न कुछ वस्त्रादि रखते, न उन्हें उनके शरीर की भी परवाह है, यदि उनके ध्यान बाद वे कुछ लेवें ऐसी राह देख कर बैठें तो भी निश्चय नहीं, कब उनकी समाधि पूरी होगी ! अथवा वस्त्र होता तो रत्न बांध कर जाते, ! और योंही छोड़ जावें तो कोई बदमास उठाकर चला जावे ! इसलिये मैं भी विचार में पड़ा हूं ! राजाने कहा तब चलो ! समय व्यर्थ क्यों बरबाद करना ! इतना कह कर चलने लगे कि परिब्राजक ने मुंह फाड़ा ! और इशारा से सूचना दी कि आप इसमें डालो ! मंत्री ने थोड़ी रक्षा लेकर उसके मुंह में डाल कर बोला कि हे ठग शिरोमणी ! आपकी पर्युपासन रक्षा से अच्छी होगी, त्यागी को रत्नों के फन्दे में पड़ने की आवश्यकता नहीं है । मंत्री ने राजा को समझाया कि यह कोई पूरा ठग है जो त्यागी का बेष करके भोले लोगों को ठगता है, नहीं तो रत्नों की क्या आवश्यकता थी यदि जो रत्नों की जो आवश्यकता थी तो फिर वस्त्रादि त्यागने की क्या जरूरत थी ! इस दृष्टांत से आजसे बदमास बेष धारियों से न ठगाना, न बदमास वृत्ति से मनुष्य जन्म हार जाना किन्तु अशठता धारण कर धर्म रत्न को प्राप्त करना, लौकिक कथा भी है कि:—

एक लड़का बात ही बात में हंसी करकरके आनन्द मानता था, तो भी लोग उसे बच्चा जानकर उसकी बातों पर खयाल नहीं करते थे, लेकिन बड़े होने पर भी उसकी बुरी आदत न छूट सकी, एक दिन नौकर होकर जंगल में भेड बकरीयें चराने लगा और दोपहर को जोर से बूम पाड़ २ कर बोला, शेर आया २ ! चोतरफ से लोग दौड़ कर आये और पूछने लगे कि शेर कहाँ है ! वो हंसकर बोला ! यह तो मेरी आदत है ! लोगों ने उसे पागल समझ बिना कहे ही चले गये, पान्तु एक रोज जब सच्चा शेर आया उस दिन लड़के ने कई बूमें पाड़ी तो भी लोगों ने उसकी हंसी की आदत समझ कर उसकी मदद कोई भी नहीं आये कमनसीब लड़के की बकरी भेडीयों का नाश हुवा और उनको बचाने को सुद गया तब शेर ने उसे भी मार डाला. इसलिये बच्चों की हंसी की आदत भी छुड़ानी चाहिये ।

(८) सुदान्तिप्य.

जो बड़े लोग अच्छी बातों के करने की कहे उसकी करने को आदत रखनी और अपना स्वार्थ बिगड़े तो भी दूसरों का भला करना ।

॥ चुल्लक कुमार की कथा ॥

अयोध्या नगरी में राजा पुंडरीक राज करता था, और उसका छोटा भाई कुंडरीक था, यशोभद्रा नाम की उसकी देवांगना जैसी भार्या थी, राजा ने उसको देखकर प्रसन्न होकर उससे कुमारों में वर्तन करने की इच्छा से दासी के साथ बुलाई, छोटे भाई की बहु ने इस बात की उपेक्षा की तो भी राजा ने दुष्टता से उसके पति को मरवा दिया, अपने पति का मृत्यु जानकर छोटे भाई की बहु सतीत्व की रक्षा करने को देशांतर में भाग गई वहां जाकर रास्ते में साध्वीओं को देखकर उनके पास जाकर अपना दुःख सुनाया साध्वीओं ने संसार की असारता पर कुछ समझाया जिससे यशोभद्रा ने दीक्षा की प्रार्थना की परन्तु यशोभद्रा के उदर में थोड़े दिन का गर्भ था उसकी सूचना उनको नहीं दी, थोड़े दिन बाद जब गर्भ के चिन्ह प्रगट दीखे तब साध्वीओं ने पूछा कि ऐसा कपट तैने क्यों किया है ! यशोभद्रा ने कहा मेरा

गुना क्षमा करो, आप दीक्षा नहीं देते और मेरे पीछे यदि दुष्ट राजा के आदमी आते तो मेरे सतीत्व का नाश होता इस हेतु से मैंने इस बात को गुप्त रक्खी थी.....साध्वीओं ने एक दयालु पुण्यात्मा श्रावक जिस ने उनको ठहरने के लिये घर दिया था उसे बुलाकर समझाया उसने सब इंतजाम करके उसके गर्भ की रक्षा की और कुछ दिन बाद पुत्र का जन्म हुआ पुत्र के जन्म के होने पर साध्वी ने फिर प्रायश्चित्त ले करके साध्वी के भेष में ही रही और लड़का श्रावक के पास ही रह कर बड़ा हुआ, और फिर वो लुल्लक नामसे प्रसिद्ध हुआ आठ वर्ष का होने पर साधुओं ने उसे समझाकर साधु बनाया, वो पीछे १२ वर्ष बाद युवावस्था की दुर्दशा से पतित होनेको तैयार हुआ. तब माता ने समझा कर दाक्षिण्यता से साधु भेष में ही रक्खा दूसरे वक्त माता की गुरुणी ने तीसरी वक्त आचार्य ने समझाकर रक्खा, तो भी संसार की वासना दूर न हुई और वो अपने घर को जाने को तैयार हुआ तब माता ने उसको समझाने के लिये रत्न कंवल और राज्य चिन्ह की मुद्रिका जो श्रावक के घर में रक्खी थी वो दिलवा कर बेटे को कहा कि तुम्हें जो राज्य की ही इच्छा हो तो सुख से इन दोनों वस्तुओं को ले कर जा, अयोध्या में तेरे बाप का बड़ाभाई तुम्हें राज्य देगा. वो कुमार चला और कोई दिन श्याम के वक्त अयोध्या में राज्य मैदान में आया जहां पर नटणी नाटक कर रही थी और राजा वगैरा सब देखने को आये थे नटणी की सुन्दरता से और नृत्य से मन तृप्त नहीं होने से राजा इनाम नहीं देता था और रात्रि अधिक जाने से लड़की थक कर समाप्त करना चाहती थी और पग की आवाज भी धीमा करने लगी उसकी माता ने देखा कि सब किये हुये खेल का नाश होवेगा इस लिये मधुर स्वर से एक गाथा बोली जिसका अर्थ यह था कि इतनी देर श्रम उठा कर जो लाभ का मौका प्राप्त किया है और इस समय जो झोड़ देवेगी तो वो व्यर्थ जायगा और फिर जिन्दगी तक रखडना पड़ेगा. क्यों कि राजा आने का मौका कचित् होता है। इस लिये प्रमाद छोड़ कार्य चालु रख, नटणी ने नृत्य चालु रक्खा उस समय जो राज कुमार आया था उसको इस गाथा से इतना आनंद होगया था कि ~~राज्य~~ मर्यादा छोड़ ~~आनंद~~

(पृष्ठ २१ वें में आठवां गुण का वर्णन पूरा कर उसे पढ़ो ।)

॥ श्रावक का नवमा गुण लज्जालुता ॥

जो लज्जालु होता है वो थोड़ा भी अकार्य नहीं करेगा, सदा चार का आदर कर उसे अच्छी तरह पालन करता है, और प्राणांत कष्ट आने पर भी उसे छोड़ता नहीं है ।

एक नगर में चंड रुद्र नाम के आचार्य आये वे चारित्र में दृढ़ होने पर भी क्रोधी अधिक होने से निरंतर एकांत में बैठ सूत्र पठन और स्मरण में रहते थे एक दिन एक श्रेष्ठ का पुत्र रात को मित्रों के साथ साधुओं के पास आया उस वक्त नव विवाहित युवक के मित्रों ने बाल चेष्टा से कहा साधुजी महाराज ! हमारा यह मित्र वैरागी होकर आपके पास दीक्षा लेने को आया है आप उसे साधु बनादो । चेले समझ गये कि ये ठट्ठा करते हैं उत्तर नहीं दिया बारंबार मित्रों ने चेलों को सताये अतएव शिष्यों ने कहा कि आप हमारे गुरु महाराज के पास ले जाओ ऐसा सुन वे भीतर कमरे में जाकर गुरुजी से भी वही कहने लगे, गुरुजी चुप रहे किंतु मित्रों ने परछे हुए लड़के को आगे कर लीजिये महाराज ! इसे चेला बनाइए ! तो भी गुरुजी न बोले तब उन्होंने धक्का देकर उस युवक को गुरु के पास भेजा गुरु ने लड़के को पूछा क्यों तू दीक्षा लेना चाहता है ? उसने कहा हां, तब ठीक है ऐसा कह कर एक दम गुरु ने क्रोधित हो उसे पास बैठा कर लोच करना शुरू किया मित्र धक्का राये और भागे जाते जाते बोले कि हम तो हांसी करते थे आप उसे छोड़दो गुरुजी ने लोच करके कहा यदि हांसी की है तो उसका यह दंड है अब जैसी तेरी इच्छा, नव युवक विचार ने लगा कि अब घर को किस तरह जाऊं ? मा बाप भी क्रोधी होंगे मैंने साधुओं को व्यर्थ सताये तो अब घर को क्यों जाऊं ? झुंड होकर लोगों को झुंड कैसे दिखाऊं ? और जो गुरु के सामने दीक्षा लेनी स्वीकार किया है तो उसे पार उतारना ही चाहिये ।

सज्जन पुरुषों के वचन पत्थर में खुदे हुए लेख की तरह अमिट होते हैं ऐसा निश्चय कर वो बोला कि हे गुरु ! आप उन लड़कों के करने पर क्याल न कीजिये मैं तो सच्चा ही आपका शिष्य हुआ हूं और वो पार

उतारूंगा आप अब यहां से बिहार करें क्योंकि आपने मुझे चक्रवर्ती के पदसे भी अधिक उत्तम पद पर स्थापन किया है किंतु संसार में रक्त मेरे मा बाप और सासु सुसरे को यह बात नहीं रुचेगी वे बिघ्न कर मुझे घर को ले जावेंगे और जैन धर्म की हीलना करेंगे गुरुने कहा अंधेरे में मुझे दीखता नहीं है वो बोला मैं उठा लेता हूं दोनों उप करण लेकर चले रास्ते में गड्डे आने पर चेला ठोकर खाने लगा तब पीड़ा होने से गुरु ने उस के माथे पर मारना शुरू किया तो भी लड़का हिम्मत रख चलने लगा फिर ठोकर खाने पर गुरु ने उसे अधिक पीट कर कहा हे दुष्ट ! ऐसा टेढ़ा रास्ता क्यों लेता हे ! तो भी चेला मन में विचारने लगा ? कि मैं कैसा अधम हूं गुरु की सेवा के बदले ऐसे दुख देने को टेढ़े रास्ते में ले जाता हूं ? इस तरह पवित्र भावना में चलते हुये और ठोकरें खाने से पग में लोहू न निकलने से और लोच किये हुये मस्तक में मार पड़ने से बहुत पीडित होने पर भी क्रोध न करने के कारण उसने थोड़ी देर में क्षपक श्रेणिक प्राप्त की और केवल ज्ञानी हुआ तब सब प्रत्यक्ष दीखने से वह सीधा चलने लगा गुरु बोले अब कैसे सीधा चलता है ! उसने कहा आपकी कृपा से मुझे दीखता है गुरु बोले मुझे क्यों नहीं दीखता वो बोला कि आपके प्रताप से, ज्ञान हुआ है गुरु ने पूछा कि केवल ज्ञान हुआ है ! उसने कहा हां गुरु नीचे उतर कर पश्चात्ताप करने लगे कि मैं ने कैसा अधम कृत्य किया है ऐसे उत्तम पुरुष को व्यर्थ दंड दिया है । क्या यह साधुता थी कि ऐसे कोमल लोच किये हुए सिर पर मैं ने पीटा ? ऐसा पश्चात्ताप करने से उनको भी केवल ज्ञान हुआ दोनों जगत्पूज्य हो आठ कर्म का नाश कर क्रम से मुक्ति को गये इस दृष्टांत से यह बताया है कि लज्जालु पुरुष अनर्थ नहीं करता, और कदाच भूल से दूसरों को पीडक होजावे तो भी पीछे इस सुशिष्य की समान अनेक कष्ट आने पर भी अपना दोष समझ भविष्य में दूसरों को पीडक नहीं होता व्यवहार में भी जो जो वचन मुंह से निकाले वो पूर्णतया विचार कर निकाले और निकल बाद उसे बराबर पार उतारे क्योंकि उसके वचन से दूसरे पुरुष विश्वास कर दूसरों से व्यवहार करते हैं उस वक्त जो वो कह देवे कि मैंने तों हांसी मैं कहा था तो दूसरे अच्छे पुरुष बीच में फंस जाते हैं ।

दे दिया उसने जहां रत्न कंवल फेंका कि फिर औरों ने भी दान दिया तब राजा को बिना इच्छा ही दान देना पड़ा और नटणी का भाग्योदय खुल गया राजा ने दान देकर उसी समय मर्यादा उलंघन करने वाले कुमार को पकड़ कर प्रभात में लाने की आज्ञा दी। आते ही राजा ने पूछा कि तू कौन है ! और हमारे पहिले दान देकर मर्यादा भंग क्यों की थी ! वो बोला कि मैं आपका भतीजा हूं और मेरी माता जो साध्वी हुई है उसने मुझे यहां भेजा है। और प्रथम दान देने का सबब यह है कि वर्षों तक चारित्र मैने पाला और अब थोड़ी अवस्था बाकी रही है ऐसे समय में उसे छोड़ चारित्र भ्रष्ट करने के लिये राज्य के लोभ में आया था अब इस गाथा से मुझे शिक्षा मिली है कि थोड़े में चारित्र का लाभ क्यों हारना जो चारित्र मुक्ति तक पहुंचाने वाला है। राजा बोला कि तू आया है तो अब राज्य ले, आग्रह करने पर भी उसको स्पृहा न हुई तब राजा चुपरहा दूसरों को पूछा कि आपने क्यों दिया ! एक बोला कि मैं दुष्टों से मिल आप का द्रोह करना चाहता था किन्तु उस गाथा से मुझे बोध हुआ कि आज तक राजा का निमक खाकर अब आखिर अवस्था में यह क्या करता हूं, और दूसरे दोनों ने ही अपने दुष्ट कृत्यों की समालोचना की, और तीनों ने कुलक कुमार के पास से दीक्षा लेने को राजा से आज्ञा मांगी और आज्ञा मिलने पर दीक्षा लेकर सुगति के भागी हुये। इस दृष्टांत से यह बोध लेना चाहिये कि जो कोई बड़ों के दाक्षिणता से भी धर्म में रक्त रहता है और बिना इच्छा भी धर्म पालता है वो कोई दिन सीधा मार्ग पर आ सकेगा और दूसरों को भी तार सकेगा।

(१०) दयालुता.

धर्म का मूल दया है उस दया के लिये ही सब महाव्रत है जिनेश्वर के सिद्धांतों का रहस्य यही है कि और जीवों को मन, वचन, काया से अपनी चरफ से शांति उपजानी, और दयावान् मनुष्य ही धर्म पाकर उस की रक्षा करेगा इसलिये धर्म रुचि का दृष्टांत कहते हैं एक जागीरदार का पुत्र गृहवास में जीवों को दुःख देना देखकर दयालुता से वैरागी होगया था. तापसा

होने से अपने निर्वाह के लिये वन में जाकर जमीनमें से कंद खोदकर लाना पड़ता था, जमीन बौना पड़ता था, बगीचे में पानी डालना पड़ता था पेड़ों को काटने पड़ते थे वो देखकर उन हरी वनस्पति में जीव जानकर उन को दुःख होता देखकर वहां से भी घबराया और बिचारने लगा कि कब सब जीवों को शांति देने वाला होजाऊं ! चतुर्दशी के दिन सबने उपवास किया और वनस्पति हरी को दुःख नहीं देने की सब को आज्ञा हुई उसको अत्यन्त आनन्द हुआ कि ऐसा सदा ही होवे तो बहुत अच्छा, फिर और साधुओं को उस रास्ते से देख कर बोला कि आप आज वन में क्यों जाते हो ! आपने आज सब जीवों को अभयदान दिया है और आप घनमें क्यों जाते हो ! एक साधुने कहा हे भद्रक ! हम साधु हैं हम वन में जाकर हरीयाली वगैरह किसी को दुःख नहीं देते ऐसा सुननेसे उसको बहुत ही आनन्द प्राप्त हुआ फिर वो साधुओं को कह कर उनके पास साधु धर्म स्वीकार किया, साधुओं ने उसे कहा, साधु तपस्वी की तरह फल नहीं खाते हैं वे तो ग्रहस्थी की दी हुई रोटी ऊपर ही सन्तोषसे दिन गुजारते हैं, ऐसा प्रत्यक्ष देख कर निरंतर साधुधर्म की प्रशंसा कर सद्गति का भागी हुआ इसलिये श्रावक को प्रथम दयालुता स्वीकार करनी चाहिये पीछे श्रावक के व्रत लेने चाहिये जिससे अर्थ दंड और अनर्थ दंड का विवेक रख सकेगा, एक पत्ते की जरूरत हो तो दूसरा कदापिन तोड़ना चाहिये क्यों कि इसमें भी जीव हैं और जीवों को दुःख नहीं देना यही धर्म है. कितनेक आदमी जान बूझकर विना समझे हरीपर चलते हैं, पानी में कूदते हैं; आग लगाते हैं, कांडी देकर घास फूस को जलाते हैं उनकी जरा गमत में हजारों छोटे जीवों का नाश होता है. ।

श्रावक का ११ वा गुण मध्यस्थ सौम्य दृष्टि ।

जिसे कोई भी दर्शन धर्म का आग्रह नहीं है वो पुरुष सत्य असत्य जान सकता है, और विवेक चक्षु से अनेक मतों का रहस्य जान उस में सार खेंच सकता है, और सार खेंच कर गुणों का अनुरागी और दोष का त्यागी हो सक्ता है । और सत्य पक्ष को स्वीकार करके भी दूसरे मत वालों पर द्वेष

छोड़ कर के उन पर भी सोम दृष्टि रख उनको शांति देता है आज के समय में जगत में अपने मंतव्य को सच्चा मान दूसरों के खंडन के आक्षेप के ट्रेकट निकाल कर परस्पर द्वेष बढ़ाते हैं वो बहुत बुरा है सरकार उन्हें दंड करती है, किताबों को रद्द कर दी जाती जाती है, समय जौर धन का नाश होता है, बुद्धि का दुरुपयोग होता है, इस लिये भव्यात्माओं को ऐसे भ्रगदों से हमेशा दूर रह कर आत्महित करना चाहिये इस गुण ऊपर ।

सोमवसु ब्राह्मण की कथा ॥

सोमवसु ब्राह्मण को परिवार के गुजारा के लिये दुकाल में एक शुद्र का धन लेना पड़ा उससे उसे भी बड़ा पश्चाताप हुवा और उसका प्रायश्चित लेने को गुरु शोधने को चला रास्ते में एक बाबा मिला उसे पूछा कि आप क्या तत्व मानते हैं. वो मठवासी बाबा बोलाकि गुरु महाराज जब मरगये तब उन के पास हम दो शिष्य थे, उस समय गुरुजीने हमें कहाथा कि मीठा खाना, सुख से सोना और लांक प्रिय होना, किन्तु हम दोनों उनसे अधिक पूछना चाहते थे किन्तु इनका देहान्त होगया जिससे हम दोनों अलग हो गये, मैं तो यहां रहता हूं और दूसरा शिष्य दूसरी जगह है, मैं यहां रह कर मंत्र, औषध से लोगों का चित प्रसन्न करता हूं, जिससे वे मीठे भोजन देते हैं, और मैं खाकर सुख से सोता हूं, सोमवसु को वो बात अच्छी न लगी जिसके गुरु के बचन में क्या परमार्थ है वो ढूंढने को उसके गुरु भाई का पता पूछा उसमें बताया और वहां से सोमवसु चला, वहां जाकर उससे पूछा उस समय कोई गृहस्थी उसे नोता देकर जीमने को बुलाने को आया था तो वो बोला कि आज हमारे यहां एक अतिथि आया है गृहस्थी बोला उसे भी ले चलो, दोनों साथ गये मिष्ठान्न खाकर आए और रात को शास्त्र पढ़ कर आनन्द से सो गये प्रभात में सोमवसु को समझाया कि मैं एक दिन मीठा भोजन खाता हूं और दूसरे दिन उपवास करता हूं गुरु के बचनानुसार मीठा खाता हूं और उपवास से भूख भी दूसरे दिन अच्छी लगती है जिससे सादा भोजन भी मीठा लगता है और किसी के पास कुछ लेता नहीं जिससे लोग प्रिय हो गया हूं सोमवसु को उससे पूरा संतोष नहीं मिला जिससे पाटली पुत्र (पट-

णा) में त्रिलोचन नाम का पंडित के घर आया और दरवाजे पर सिपाई से पूछा कि पंडित जी हैं ! उत्तर मिला अभी मिलने का मोका नहीं है, तब खड़ा रहा उस समय एक लड़का बगीचा से फूल दांतण लेकर आया था एक आदमी ने उससे दांतण मांगा, लड़के ने नहीं दिया और घर के अंदर जा पीछा आकर फूल बगैर वांटने लगा उस लड़के के जाने बाद सिपाही से पूछा कि लड़के ने प्रथम क्यों नहीं दिये, और पीछे दिये इसका क्या कारण उसने उत्तर दिया कि प्रथम स्वामी के सत्कार के लिये सब उसे अर्पण कर दिये, पीछे जो बाकी बचे सो सब को बांटना चाहिये । वो उसने बांट दिये ।

थोड़ी देरमें दूसरे घर पर दो आदमीने एक औरत से पानी मांगा और तने एक को घरमें से लोटा लाकर दीया, दूसरे को धोबे से पानी पिलाया, सिपाई से पूछा कि औरत ने ऐसा भेद क्यों रक्खा ! उत्तर मिला कि एक उसका पति दिखता है दूसरा कोई मामुली आदमी है, इसलिये पति का सत्कार करना पत्नी का धर्म है. थोड़ी देर बाद एक पालखी में बैठ कर छोटी युवति आई जिसके आगे कितने ही आदमी उसकी प्रशंसा करते थे । सिपाई से पूछा कि यह क्या है ? उत्तर दिया कि यह पंडित की लड़की विदुषी (पदी हुई) है राजा के अंतःपुर में आज समस्याएं पूछी उसमें यह लड़की उत्तीर्ण हुई वहां से सिरपाव लेकर राज्यमान से आई है.

सिपाई से पूछा क्या समस्या थी

उत्तर मिला कि तेन शुद्धेन शुद्धयति यह समस्या के तीन पद और बनाओ.

पीछे लड़कीने इस तरह उत्तर दिया है वह सुनो.

यत्सर्वं व्यापकं चित्तं, मालिनं दोष रेणुभिः—

सद् विवेकांबु संपर्कात् तेन शुद्धे न शुद्धयति ॥ ॥

सोमवसु विचार में पड़ा कि जिस पंडित का द्वारपाल सिपाई और लड़की भी ऐसे विद्वान हैं तो पंडित कैसा भारी विद्वान होगा ? थोड़ी देर में पंडित जी के मिलने का समय हुआ और वो भीतर गया और पंडितजी से मिला

और उनके वचनों का परमार्थ पूछा. उसी समय एक छात्रने पंडित जीसे पूछा कि मैंने अपने गुरुजी की स्त्री का स्पर्श किया उसका क्या प्रायश्चित है? पंडित जीने कहा कि गरम लोहेकी पुतली से स्पर्श (आलिंगन) करो । गरम पुतली भंगाकर जहां लड़का स्पर्श करने लगा कि तुरंत पंडितजीने रोका कि बस । हो- गया प्रायश्चित । लड़के की धैर्यता की सब प्रशंसा करने लगे ।

सोमवसु भी पूछने लगा कि मेरा यह दोष है उसका मुझे प्रायश्चित हो, और पूर्व के तीन वचनों का परमार्थ समझावो कि झूठा खाना, सुख से सोना लोगप्रिय होना वो क्या है ।

पंडितने उत्तर दिया कि देखो यह मट्टी के दो गोले हैं उनमें भीतको कौन लगता है? सूखा वा गीला? सोमवसु बोला कि गीला! पंडितने कहा कि ख्याल रखो कि इस तरह संसार में ममत्व से पाप होता है इसलिये राग छोड़ो सोमवसु बोला ठीक, चारित्र्य लूंगा अब तीन वचनों का परमार्थ समझावो, पंडित बोला कि । जो सर्वथा त्यागी है, उसके पास दीक्षा लो वो समझावेगा. तो भी सोमवसुने पूछा तब पंडित बोला कि जो राग द्वेष रहित आरंभ पाप के त्यागी शुभ ध्यान में रक्त होकर सोता है वो सुख से सोता है, और भंवराकी तरह गोचरी लाकर निर्दोष वृत्ति से जीवन गुजारने से परभवमें सद्गति के सुख भोगता है, और जडीबूटी मंत्र चमत्कार बिना ही परलोकके हितार्थ रक्त रहता है वो सब उत्तम लोगोंको माननीय बंदनीय और प्रिय होता है न किसी के धन मालकी वांछा करता है! ऐसे गुरुकी शोध में सोमवसु पंडितकी रजा लेकर चला, रास्ते में एक उद्यान में सुघोष गुरु मिले, उनहे मिल बात चित की गुरु ने समझाया रातको उनके पास ही सोगया मधरात के समय वैश्रमण (कुबेर) लोगपाल आया और सुघोष आचार्य को वंदन कर बोला कि आपने जो सूत्र पढा उससे मेरा चित्त प्रसन्न हुआ है; इसलिये आज्ञा करो कि मेरा क्या प्रयोजन था ! क्या चाहते हैं, आचार्यने कहा कि प्रयोजन नहीं है. सिर्फ सूत्रोंको याद करना और उसमें रात्रिका निर्वाह करना इसलिये सूत्र पढा था आपको धर्म लाभ हो, कुबेर वंदन कर अदृश्य हुआ. आचार्य की निस्पृहता देख सोमवसु को स्थिरता होगई और परिचय से मालूम भी होगया कि जैसे बोलते हैं वैसा पालन करने वाले भी हैं. उसने वहां ही दीक्षा ली और सद्गतिका भागी हु-

आ, इस दृष्टांत से यह बताया है कि प्रथम अच्छे गुरुका शोध करने में मध्यस्थता गुण चाहिये कदाग्रही प्रथम से ही आग्रह रखकर रागी होकर दोष नहीं देखता है और पीछे गुरु के दोष शिष्य को दुःख दायी होते हैं। इसलिये निर्दोष ज्ञानी गुरु के चरणकी सेवा करने पहले मध्यस्थ सौम्य दृष्टि होना आवश्यक है। किंतु अच्छा धर्म पानेबाद दूसरोंको कटाक्ष वचन नहीं कहना संतोष से समजाया न समझे तो भी आप क्रोध न करें।

(१२) गुणानुरागी होना

आवक धर्म पाने पहले गुणानुरागी होना चाहिये। जिससे वो गुणी का ही पक्ष कर गुण रहित की उपेक्षा करे, और पीछे गुणों को लेकर उसकी रक्षा करके दिन प्रतिदिन गुणों की वृद्धि करे।

कोई ऐसा भी कहते हैं कि—

शत्रोरपिगुणा ग्राह्या, दोषा वाच्या गुरोरपि ।

अर्थात् शत्रु से भी गुण लेना, और गुरु के भी दोष को प्रगट करना इस बचनानुसार दूसरोंकी निन्दा करना भी ठीक है उनको यह उत्तर है कि निन्दा करने वाला जितना समय व्यर्थ करेगा उतने समयमें निन्दा न करनेवाला अधिक गुण प्राप्त कर लेवेगा और निन्दकको पीछे व्यर्थ क्लेश भी बढ़ता है इसलिये समाधि बाँछक पुरुषों को दूसरों के दोषोंको देख उसकी उपेक्षा करनी चाहिये, जैसे कि कर्म वशात् किसी ने दुराचरण किया उसे समझाना ठीक है न समझे तो जगह २ उसकी निन्दा न करनी न उसका संग वा प्रशंसा करनी उसे उपेक्षा कहते हैं वो उपेक्षा धारण करनी क्योंकि—

सन्तोष्य सन्तोपि परस्पर दोषा, नोक्तः श्रुता वा गुणमाव हन्ति ।

वैराणि वक्तुः परिवर्धयन्ति, श्रोतुश्च तन्वान्ति परां कुबुद्धिं ॥

और भी अधिक दोषी जनों को देखकर मन में चिंतवना करे कि “अनादि काल से जीव दोषों से भरा है, किन्तु जो गुण पाना वोही दुर्लभ है इसलिये किसी में गुण देखने में आये वोही आश्चर्य है ! दोष तो हैं ही ! उस में निन्दा क्या करनी ! बालक में मंद बुद्धि होना आश्चर्य नहीं है किंतु उसमें

बीचण बुद्धि होनाही आश्चर्य जनक है। कुबुद्धि होना मुश्किल नहीं है, सुबुद्धि प्राप्त होना ही मुश्किल है ऐसा समझ दोषों की उपेक्षा कर गुणानुरागी होना, लौकिक में गुस्से हैं कि दूसरों का विनय करना और दूसरों का भला करना है वे ही लोकोत्तर गुण, होते हैं और त्याग वृत्ति, तथा सम्यक् दर्शन प्राप्त कर और निरीह होकर मोक्षार्थ के लिये ज्ञान पढ़ चारित्र्य लेना इसलिये लौकिक लोकोत्तर गुण जिसमें अधिक हो उसका संग कर आत्महित करना चाहिये ऋषभदेव प्रभु का जीव जो धनासार्थवाह था उसने मुनिराजों को सेवा करके दान देकर गुणानुराग कर सम्यक्त्व प्राप्त किया, बाद में तीर्थकर पद पाकर अनेक जीवों को बोध देकर इस अव सर्पिण काल में प्रथम धर्मोपदेशक होकर मोक्ष में गये जिनको जैन वा जैनेतर ऋषभदेव नाम से स्मरण करते हैं. हेमचंद्राचार्य भी लिखते हैं कि—

आदिमं पृथिवीनाथ, मादिमं निष्परिग्रहं ।

आदिमं तीर्थनाथं च वृषभ स्वामिनं स्तुमः ॥ १ ॥

(१३) सत्कथक.

जो आदमी अशुभ कथा करेगा उसका विवेक रत्न नष्ट होगा और मन में मलिनता होगी इसलिये स्त्री, भोजन, देश और राज कथा छोड़नी चाहिये.

स्त्रीयों की कथा करने से दुराचार की वृद्धि होती है, भोजन की कथा से घर के भोजन में संतोष नहीं होता, देश कथा से सर्वत्र घूमने की इच्छा होती है राज्य कथा से राजद्रोह का प्रसंग आता है, इस लिये ऐसी कथाओं को छोड़ भव्यात्मा को धर्म कथा में राग धरना जैसे कि तीर्थ करोंने परोपकार के लिये राज्य वैभव को भी छोड़ दीक्षा अंगीकार की है और दुष्टों ने अनेक दुख दिये तो भी उन पर क्रोध नहीं किया जिससे केवल ज्ञान पाकर मोक्ष में गये आज तक उनका ध्यान दरेक मोक्षाभिलाषी पुरुष करता है, मंदिरोंमें लाखों रुपये खर्चकर धनाढ्य धर्मी श्रावक मनोहर शांत मूर्ति स्थापन कर उनका पूजन करते हैं मुनिराज भी उनका दर्शन कर आत्मा को पवित्र करते हैं पहाड़ों पर उन्होंने जिस जगह मुक्ति पाई है वहां संमेत सिखर में २० तीर्थ करके मंदिर आज भी मौजूद है और उन पवित्र प्रभु के जन्म से

ही देवता इन्द्र बहुमान करते हैं उनका च्यवन (गर्भ में आना) जन्म, दीक्षा, केवल ज्ञान और निर्वाण (गोक्ष गमन) कल्याण रूप होने से पांच कल्याणक माने जाते हैं उन दिनों में गुणार्थी, तपश्चर्या कर जाप करते हैं चैत्र सुदी १३ के दिन महावीर प्रभु का जन्म होने से जगह जगह महावीर जयंती होती है पौष वदी १० को पार्श्वनाथ प्रभु का जन्म होने से बहुत से लोग एकाशना वा आंवीलका तप करते हैं, श्रावण सुदी ५ के दिन नेमिनाथ प्रभु का जन्म होने से लोग उपवास करते हैं, उन जिनेश्वरों के कल्याणककी तिथिें याद रहे इस लिये कल्याणक तिथियों की टीप छपाकर मंदिर वगैरह में लगाते हैं वा घर में रखते हैं, जिससे ख्याल रहता है कि अहो ! आज उन जिनेश्वर अमूक कल्याणक है ! धन्य है मेरामनुष्य जन्म ! कि मैं आज उन पवित्र पुरुष का स्मरण कर रहा हूं । (कल्प सूत्र का हिंदी भाषान्तर पढ़ो)

जैन में तीर्थ दो प्रकार के हैं एक स्थावर तीर्थ, और दूसरे जंगम तीर्थ. साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका, धर्म के अंग होने से और उनमें रह कर तिर-ता होता है इस लिये उसे तीर्थ कहते हैं ऐसे ही जहां तीर्थ कर का कल्याणक हुआ हो, वा जहां पर उन्होंने ने ध्यान किया हो उपदेश दिया हो वहां पर मंदिर बनाते हैं वहां जाकर भव्यात्मा अपने आत्मा को पवित्र करते हैं उससे भ्रातृ प्रेम बढ़ता है तीर्थों की यात्रा में आने वाले मुनिराजों का दर्शन और धर्म श्रवण भी होता है घर से निवृत्ति होती है पाप व्योपार छूट जाता है, इससे वहां जा कर भव्यात्मा तिरते हैं ।

इस लिये उसे स्थावर तीर्थ कहते हैं. ऐसे तीर्थ लौकिक में भी हैं परंतु जैनों में वैराग्य दशाधिक होने से वीतराग की जहां मूर्ति वा चरण हो वहां ही जाकर ध्यान करने का गुण होने से उनके तीर्थ लोकोत्तर कहे जाते हैं जैसे कि

आबुअष्टा पद गिरनार, संमेत शीखर शत्रुंजय सार ।

पंच तीरथ उत्तम ढाम, सिद्ध थाया तेने करुं प्रणाम ॥

इसके सिवाय और भी तीर्थ महात्म्य की किताबों में उनका वर्णन है शास्त्रों में भी लिखा है कि ऐसे तीर्थों में जाने से भव्यात्माओं का दर्शन निर्मल होता है अर्थात् धर्म श्रद्धा अधिक होती है ।

श्रावकों को सत्कथा निरंतर श्रवण करने को मिले इस लिये गणधर भगवतों ने प्रभु के पास जो जो वचन सुनेथे उनमें महान पुरुष के चरित्रों को भी सूत्रों में लिखे हैं ज्ञातासूत्र कथाओं से विभूषित है साथ साथ इस दृष्टांत का सार लेना भी बताया है विपाक सूत्र में धर्मी और पापियों के १०-१० दृष्टांत बता कर पुण्य पाप के यहां पर वा दूसरे भव में क्या फल भोगने पड़ते हैं वो अच्छी तरह बताये हैं रायपसेणी सूत्र में सूर्याभ देव का दृष्टांत बता कर उसका तीन भव का वर्णन बताया है धर्मोपदेश के मुख्य अधिकारी साधु होने से वे साधु गांव २ शहर २ फिर कर धर्म सुनाते हैं ।

इनकी गेरहाजरी में उत्तम श्रावक भी धर्मोपदेश के ग्रंथ सुना सके इस लिये अनेक चरित्र वा रास भी बनाए हैं आंबिल की ओली में श्रीपाल चरित्र सुनाते हैं जिसमें मयणा सुंदरी ने कोढिया पति का भी सन्मान कर सत्त्व पाल कर धर्म के प्रताप से पति को निरोगी बनाकर पति को धर्म में जोड़ कर उसका बापका राज्य पुनः दिला दिया है, और जिसने अपने बापको भी अपने उत्तम वर्तव से चकित किया है उन बातों से चाहे ऐसा कठोर हृदय वाला पुरुष वा स्त्री भी धर्मी हो जाते हैं इस लिये ऐसे उत्तम कथा के ग्रंथ रत्न रूप होने से उनकी बहु मान्यता कर जो पढ़ते हैं वा सुनते हैं वे ही धर्मभागी हो सक्ते हैं क्योंकि उनके विवेक चक्षु खुल जाते हैं ।

(१४) सुपक्षयुक्त

धर्म रक्त सदाचारी परिवार वाला पुरुष बिना विघ्न धर्मपाल सक्ता है और उसे धर्म कार्यमें उसका परिवार सहायक होने से अच्छी तरह आराधना होने से मुक्ति तक पहुंच सक्ता है ।

अर्थात् घर में नोकर भी सदाचारी होना चाहिये और अपने लड़के लड़की का संबंध भी सदाचार धर्मात्मा गृहस्थीओं के लड़की लड़के के साथ करना चाहिये कि पीछे पश्चात्ताप करना न पड़े ।

पुंड वर्धन नगर में दिवा कर सेठ रहता था उनकी भार्या ज्योतिमति से प्रभाकर पुत्र हुआ उनका धर्म बुद्ध का बताया हुआ था जिनमें मांस

खाने का प्रचार भी था एक वक्त प्रभाकर पुत्र हस्तिनागपुर को व्योपार्ये गया जौर जिनदास सेठ के घर को ठहरा उसकी भार्या पद्मश्री थी, और जिनमति नाम की पुत्री थी उत्तका जैन धर्म था, व्योपार से प्रभाकर का जिन दास से मिलना हुआ, और जिनमति के गुणों से रंजित होकर उसको उस के बाप से मांगी सेठ ने धर्म भिन्न होने से ना कही तब वो प्रभाकर साधु के पास जाकर कपटी श्रावक, बन कर धर्म कथा सुनने लगा बारह व्रत लेकर यथा योग्य भक्ति कर साधुओं को प्रसन्न किये जिससे जिनदास भी उसे धर्म बंधु जान अपनी पुत्री दी वो एक दम विवाह हो जाने बाद सेठ की रजा ले कर अपने बाप को मिलने को स्वदेश गया वहां जाने से जिनमति को अत्यन्त कष्ट होने लगा क्योंकि धर्म बौद्ध होने से वे मांस भक्षण बगैरह भी कर सक्ते थे, जैनों में जीव दया प्रधान होने से मांस का नाम भी नहीं लेते थे, उसका मन रोज रोज खेदित हुआ, परन्तु कपटी पति को दया नहीं आई और मांस का धुंवां भी लेने को जिनमति नहीं चाहती थी, जिससे पति भी घबराने लगा कुटुंब में क्लेश रहने से घर की संपत्ति भी नाश होने लगी प्रभाकर ने बौद्ध गुरु से कहा उसने कुछ मंत्र बल से जिनमति को भ्रष्ट करना चाहा तो भी जिनमति न डरी, न मांस को पकाया न खाया, न मांस भक्षी बौध साधुओं का सन्मान किया किंतु अपने जैन धर्म के साधुओं से जाकर कहा कि अब क्या करूं ? गुरु ने नवकार मंत्र का ध्यान बताया जिससे पति भी सुधर गया और सासु सुसरा भी मांस भक्षी बौध धर्म छोड़ जीवदया प्रधान जैन धर्म के पालक हुए जो उस समय जिनमति डर जाती तो महा अनर्थ होता इस लिये जहां तक बने वहां तक सत्संगति सत्यज्ञ करना चाहिये कि जिससे ऐसा रोज का घरमें क्लेश न होवे न असमाधि होवे ।

(१५) दीर्घ दर्शी का वर्णन

जो दीर्घदर्शी पुरुष होता है, वो कार्यको नहीं बिगड़ने देता है और थोड़ा बीगड़े तो भी सुधार सकता है और थोड़े खर्च से ज्यादा लाभ मिलता है और हजारों मनुष्यों को दुःख से और पाप से बचा सकता है ।

महाधन नामका एक सेठ राजग्रही नगरीमें रहता था उसकी भार्या सुभद्रा नाम की थी उसके चार सुशील पुत्र धनपाल, धनदेव, धनगोप, धनरक्षित नाम के थे. वे सभी ७२ कला युक्त होने पर भी अपनी सौजन्यता से लोगों को प्रसन्न करने वाले थे तोभी बूढ़ा सेठ बिचारने लगा कि भविष्य में उनकी भार्या उनका धनका दुरुपयोग न करे और सब मिलकर घर में शांति में रहे इसलिये उनकी परीक्षा कर उनके घर का भार देना चाहिये ऐसा निश्चय कर अपने रिस्तेदारों को एक दिन नोता देकर जिमने बुलाया वे सभी आये तब जिमा कर उनके सामने पुत्र बधूओं को बुलाकर मूंठी मूंठी अनाज दिया कि उनको रखो जब कार्य पड़ेगा तब मैं तुम्हारे से पीछा लूंगा जो “उज्झिता” थी वो बिचारने लगी कि ऐसा अनाज घर में बहुत भरा है, क्यों रखना, उसी समय घर में जाकर अनाज को फेंक दिया दूसरी “भक्षिका” नाम की थी वो बिचारने लगी कि अनाज को व्यर्थ क्यों फेंकना ! घर में जाकर खा गई, तीसरी रक्षिका थी उसने बिचार कर संदूक में संभाल कर रख दिया चौथी जो रोहिणी थी उसने बिचार कर अपने बाप के वहां बोलने को भेज दिया ।

थोड़े वर्ष जाने बाद इसी तरह रिस्तेदारों को जिमा कर सब के सामने बहूओं के पास वोही अनाज मांगा चार बहूओं ने पास आकर अनाज देने के समय तीनोंने एक एक मूंठी पीछा दिया किन्तु चौथी बहू बोली यदि आप को अनाज पीछा चाहिये तो मेरे बाप के वहां से मंगालो किन्तु गाढे भेजकर मंगाना सेठने चारों को सत्य २ बात कहने को कहा उनका उत्तर सुनकर उनके योग्य घर में कार्य दिया और कहा कि जो आप उसे उलंघन करोगे तो मेरे धन का मालिक नहीं हो सकोगे ! उज्झिता को घर का कूड़ा निकाल फेंकने को दिया, भक्षिका को रसोई बनाने का, और रक्षिकाको घरको घेना हीरामणि कंगैरह दिया और रोहिणी को घर की स्वामिनी बनाकर उसे सब अधिकार दिया इस दृष्टांत से मालुम होगा कि दीर्घदर्शीपना जिसमें ज्यादा था उस बधू को सब का स्वामित्व मिला ऐसे ही दीर्घदर्शी पुरुष इस लोक में धर्म पाकर कीर्ति बढ़ाता है परलोक में मुक्ति का अधिकारी होता है !

(१६) विशेषज्ञ गुण का वर्णन

विशेषज्ञ प्राणीयोंका वा जड़ पदार्थों का गुण दोष जान कर विचार पूर्वक उनका उपयोग करता है, जिससे वो धर्म पा सकता है, और अनर्थ दंडवा पाप से बच सकता है. और पक्ष पाती कदाग्र ही के जाल में नहीं फँसता, न धर्म भ्रष्ट होता है, न दूसरों को फँसाता है ।

एक चौर का दृष्टांत ।

एक पुरुष पाप के उदय से चोरी करने लगा, और जहां तहां जाकर द्रव्य दूँदने लगा एक समय पर तीन विदेशी पुरुष धन कमा कर स्वदेश में जाते थे उनके पीछे पीछे वो चला और उनके समान व्योपारी बनकर मित्र होनाया, थोड़े दूर जाने के बाद व्योपारी विचारने लगे कि लूटारों का जंगल में गये बिना नहीं चलेगा और वे लूट लेंगे तो प्रथम उपाय करना ठीक है सबने द्रव्य व माल को बेच रत्न लिये, और तीनों ने अपनी जाँघ में चीरा लगा कर उनमें रत्न रखकर संरोहिणी औषधि से धाव अच्छा कर लिया. चौथे व्योपारी के पास इतना द्रव्य नहीं था जिससे वो उनका रत्नक हुआ और व्योपारियों ने भी कहा कि तुम्हे हम देश में जाकर कुछ हिस्सा देंगे चोर विचार ने लगा कि मुझे तो सभी के रत्न लेने हैं अब अच्छा हुआ कि बे सब मेरा विश्वास भी करने लगे हैं ।

रास्ते में लूटारों के स्थान में एक तोता आश्चर्य कारी था उसने कहा कि हे लूटारे ! आओ ! धन आ रहा है ! लूटारों ने व्योपारियों को पकड़े और कहा धन दे दो, और सुख से चले जाओ ! उन्होंने इंकार किया और कहा कि हमारे पास कुछ नहीं है तब उनकी तपास कर छोड़ दिये तो भी तोता पुकार ने लगा कि मत जाने दो ! उनके पास धन है, तब उनको मारने का विचार किया तब चोर ने विचार किया कि यदि वे उनको पहिले मारेंगे और रत्न निकाल लेंगे तो मैं बिना रत्न का भी मरूंगा, अब मृत्यु तो आया है। मरने के समय भी कुछ धर्म करूं। ऐसा विचार कर बोला कि हे लूटारे ! यदि जो आपको तोते का ही कहना सच्चा लगता है तो ये मेरे बड़े भाइयों को पीछे मारना मुझे ही पहिले मारदो !

आपकी खात्री हो जावे । पीछे उनको भी मारना लूटेरों ने उसी समय उसकी जांघ चीरी, धन नहीं मिला, दूसरी जांघ चीरी, तो भी धन नहीं मिला. हाथ भी काटे तब भी कुछ नहीं मिला तब लूटेरों ने उसकी दुर्दशा देख दया आई. तोतेकी गरदन पकड़ मारकर फेंक दिया और अपने स्थान में उदासीन होकर बैठे. तीन व्यापारी छोड़ दिये वे चले गये किन्तु चोरके हृदय में उनके पर क्रोध नहीं आया जिससे समीप में रही हुई क्षेत्र देवता ने उसी वक्त चोर की सहाय कर उसे अच्छा बना कर कहा कि जगत में तेरे समान क्या क्या उपकार करूं ? चाहे सो मांग ले ? वो बोला कि तोते को अच्छा बनादो ? जो इस समय तड़फ रहा था. उसे अच्छा बनाया, फिर देवी बोली कि और क्या करूं ? वो बोला ! साधुओं का मिलाप करादो अब धर्म पाकर पूर्ब पापों का प्रायश्चित्त लेकर पवित्र होकर कर्म के फंदे से छूट जाऊं ? देवी ने वैसा ही किया वो विशेषज्ञ होने से सब को बचा कर लूटेरों को भी सुधारने वाला होकर साधुओं के पास जाकर मुक्ति का भाजन हुआ, इस लिये जो विशेषज्ञ होता है वोही धर्म पा सकता है ।

श्रावक का वृद्धा नुग (१७) वा गुण

जो पुरुष बड़ों के मार्गमें चलता है वो ही इस लोक में सुखी होता है अथवा छोटी उम्र में लड़कों की बुद्धि विशाल न होने से दुष्ट लोग उनको फसाते हैं. इस लिये प्रत्येक कार्य करने में मा बाप बड़े भाई वगैरह को पूछ कर कार्य करने से अधिक लाभ होता है वैसे ही धर्म कार्य में भी जो बड़ों के पीछे जाते हैं. वे धर्म पा सकते हैं क्योंकि बड़ों को ज्ञान है कि पाप का फल दुःख और पुण्य का फल सुख है और अनुभव से भी वे जानते हैं कि इस तरह से बड़ों के कहने में रहने से इतना लाभ हुआ है. इस लिये बड़ों के पीछे चलना ठीक है ।

दृष्टान्त

एक राजा को जवान और बूढ़े मंत्री थे. राजा को एक दिन जवान ने कहा कि आप काम नहीं करने वाले बूढ़ों को तनखा क्यों व्यर्थ देते हो । राजा ने कहा, ठीक है ? कल परीक्षा कर योग्य करूंगा. दूसरे दिन सभा में

राजाने कहा कि मेरे शिर पर पैर देने वाले को क्या करना । एक युवान शीघ्र बोला के हे राजन ! उस दुष्ट की इसी समय जान लेकर प्रत्यक्ष बताना चाहिए कि राजा के शिर में पैर लगाने से क्या फल मिलता है ! राजा ने बूढ़े मंत्रीओं से पूछा कि आप की क्या राय है ? वे बोले विचार कर उत्तर देंगे, राजा की रजा लेकर वे सभी एकांत में जाकर परस्पर विचार कर राजा को कहा महाराज ! उसकी योग्य वस्तुओं से पूजा सत्कार होना चाहिये, राजा ने युवानों को बुलाये और पूछा कि क्यों आप समझे ? वे बोले नहीं, तब राजा की आज्ञा से एक बृद्ध मंत्री ने उन्हें समझाया कि राजा का प्रबल प्रताप से कौन उसके शिर पर पैर लगा सकता है । विचारो कि एक तो राजा जी अपनी मा के चरण में शिर झुकाते हैं उस माता का पेर लगने से आप उसको मार सकें हो ? वे चुप होगये ! एक ही बात में युवक शांत होकर बृद्धों के चरणों में पड़े और अपनी तुच्छता छोड़ प्रत्येक कार्य में उनकी राय लेने लगे उत्तम जन की संगति से जैसे पारस पत्थर से लोहा भी सोना हो जाता है वैसे ही निर्गुणी भी गुणवान हो जाता है इस लिये गुण में भी जो बड़े हैं उनकी भी अधिक संगति करना और पाप से बचना ।

श्रावक का १८ वा विनय गुण ।

सर्व गुणों का मूल विनय है, और सम्यक् दर्शन ज्ञान, चरित्र, ज्योत्स्नोत्तर प्रधान गुण हैं उनका भी मूल है, इस लिये मोक्ष का मूल भी विनय है इस लिये विनीत पुरुष सर्वत्र प्रशंसा करवे योग्य है ।

एक छोटे गांव में एक जमींदार का लड़का कोमल स्वभाव का और बाप की आज्ञा में रहने वाला था, प्रभात में उठते ही उसके चरणों में शिर झुकाता था और हर समय “जीकार” से बड़ी इज्जत से काम पढ़ने पर बाप को बुलाता था, एक दिन उसके बाप ने गांव के जागीरदार को अन्तः देखकर उसे नमस्कार किया, लड़का ने भी उसे शिर झुकाया जागीरदार ने छोटी उम्र में विनीत देख अपने पास रखा, एक समय जागीरदार उसे राज ग्रही नगरी में ले जाकर राजा श्रेणिक की सभा में खड़ा किया राजा को उस जागीरदार ने नमस्कार किया तब लड़के ने भी नमस्कार किया, श्रेणिक

राजा भी प्रसन्न होगया और अपने पास उस लड़के को रखा. एक समय राजा महावीर प्रभु को बंदन करने को गया, और जब महावीर प्रभु को श्रेष्ठिक राजा ने नमस्कार किया उसी समय लड़के ने भी नमस्कार किया. उसकी विनीत प्रकृति से प्रभु ने उसे धर्म समझाया उसने कहा मैं आज से आप की सेवा करूंगा और शस्त्र लेकर हाजर रहूंगा. प्रभु ने कहा कि कर्म शत्रु को जितने में और शस्त्र की आवश्यकता नहीं है. रजोहरण मुहपति से ही कार्य सिद्धि होती है, मात पिता की आज्ञा लेकर उसने प्रभु के पास दीक्षा ली इस लिये विनय गुण वाला ही धर्म भागी हो सक्ता है ।

श्रावक का १६ वां कृतज्ञता गुण ।

जो कृतज्ञ होतो है वो तत्त्व बुद्धि से परमार्थ समझकर धर्मोपदेशक गुरु का बहुमान करता है और प्रति दिन गुरु महाराज उसे नयी २ हित शिक्षा देते हैं, इससे उसमें गुणों की वृद्धि होती है इस लिये धर्मका अधिकारी कृतज्ञ हो सक्ता है ।

तगरा नगरी में रतिसार नाम का राजा जैन धर्म पालने वाला था, उस का पुत्र भीमकुमार था. उसने सब कलाओं का समूह सीख कर विविध क्रीडाओं में रक्त होकर समय बिताने लगा जिससे राजा ने पुत्र को कहा बेटा ! अभी तुझे कला सीखनी बाकी है तो क्यों समय खेलने में खो रहा है ! उसने कहा कौनसी कला सीखने की है । बाप बोला धर्म कला, उस कला बिना सब कला व्यर्थ हैं. कुमार ने उसी समय धर्म कला सीखने को पिता की आज्ञा मांगी, बाप ने साधु के पास ले जाकर साधुजी से सोंप कर लड़के को कहा उनकी सेवा कर पढ़. लड़के ने उस दिन से विनय पूर्वक धर्म शास्त्र पढ़ना शुरू किया जिन मंदिर में जाकर चैत्य बंदन नमस्तुष्टुएं जावंती चेड़ आई, जावंत केविसाहु उवसगग हरं जयवीरराय स्तुति स्तोत्र पढ़ कर निरंतर द्रव्य पूजा भाव पूजा में रक्त रह कर बिधि अनुसार सब क्रिया करने लगा और सामायिक प्रतिक्रमण जीव विचार नव तत्त्व श्रावक के योग्य पढ़ने के जितने छूटे छूटे प्रकरण हैं वे पढ़ कर आनंद मानने लगा, और अपने

बाप ने ऐसे साधु की संगति कराई इस लिये निरंतर बाप का भी अत्यंत उपकार मानने लगा, श्रावक के बारह वृत लेकर ग्रहस्थी धर्म पालने लगा.

एक समय उसके बापने एक सेठ की लड़की खुबसुरत देख मोहित होकर उस कन्या के बाप से मांगी कन्या के पिता ने ना कही, राजा ने कारण पूछा तब उत्तर मिला कि मेरे दोहिते को भीमकुमार के सामने राज्य नहीं मिलेगा, जिससे बाप चुप होगया भीम कुमार ने वो बात सुनकर ब्रह्मचर्य की जीवन पर्यंत की प्रतिज्ञा लेकर सेठ को समझाकर राजा को कन्या दिलवाई वो रानी से पुत्र भी हुआ और भीम ने उसे बंधु जान कर सब विद्या पढाकर राज्य के योग्य बनाया, और उसे राज्य भी समय पर दिलाया और भीम प्रतिज्ञा पूरी होने से निर्भय होकर श्रावक धर्म और ब्रह्मचर्य को पालन करने लगा एक दिन इंद्र ने सभा में उसकी प्रशंसा की वह एक द्वेषी देव को सहन नहुई जिससे परीक्षा करने को आया भीमकुमार के सामने एक वृद्ध स्त्री आकर बोली हे भीम ! तू दयालु शिरोमणि है जगत् माननीय है, तेरे गुण सुन कर मेरी यह लड़की जो गुणिकापुत्री है और सब कला में चतुर है वो तेरे गुण पर प्रसन्न होकर प्रतिज्ञा कर आई है इस लिये तू उसे अपनी स्त्री बनाले ! जो तू मंजूर नहीं करेगा तो तेरे सामने यह कन्या जीती जलेगी ! जिससे स्त्री हत्या का निरर्थक महा पाप लगेगा । भीम चुप रहा तब बुढिया बोली जगत् जीव हितकारी कुमार, यदि जो तुझे ब्रह्मचर्य वा स्त्री संग का नियम हो तो उसे दो मधुर वचनों से संतुष्ट कर कि जिससे शृंगाररस के वचन सुनकर वो भी कामाग्नि शांत करे । भीम मौन रहा बुढिया फिर बोली हे नरेन्द्र कुल दीपक । एक समय उस तरफ स्नेह दृष्टि से तो देख कि विचारी मरती समय भी कन्या शांत होकर दुर्गति में न जावे । भीम ने उत्तर दिया कि हे भद्रे । विषसे संजीवन डोरी बढ़ती नहीं इस लिये धर्म प्रिय मुक्ति का मार्ग शोध ! यहां पर राँम में भी संसार वासना नहीं है ! बुढिया ने अनेक उपाय किये तो भी वो वृत भंग नहीं करता देख देव रूप में होकर भीम को कहा जैसी इंद्र ने तेरी प्रशंसा की थी, वैसा ही तू है इस लिये तुझे धन्य है, तेरे धर्म में मैंने विघ्न किया है उसकी क्षमा चाहता हूं, देव गया बाद भीम ने व्रत पाल सद्गति प्राप्त की इस लिये कृतज्ञ होता है वोही धर्म पाकर उसे अच्छी तरह पाल सकता है ।

श्रावक का २० वां गुण परहितार्थ कारी ।

पर हितकारी होता है वो धर्म अच्छी तरह समझ निरीह चित्त वाला हो कर लोगों में धन्यवाद पाता है और महा सत्यवान् होने से दूसरों को भी धर्म में लगा सकता है ।

परोपकारैक रतिर्निरीहता, विनीतता सत्यम तुच्छ चित्तता ।

विद्या विनोदोऽनुदिनं न दीनता, गुणा इमे सत्ववतां भवन्ति ॥

परोपकार में ही आनंद, निरीहपना, विनय, सत्य, गंभीरता, रोज विद्या से विनोद और अदीनता इतने गुण सत्यवान पुरुष में होते हैं ।

उसपर द्रष्टांत.

विजय वर्धन नगर में विशाल सेठ का पुत्र विजय नाम का था जिसने गुरु के पास सुना था कि परहित में तत्पर रहना और क्षमा को प्रधान रखना. बड़ा होने पर भी उसने वह बात याद रखी. एक दिन वो सुसराल में गया और बहू को लेकर आता था रास्ते में पानी निकालने के समय पति को कुबे में पत्नी ने गिराया और पीयर चली गई तो भी पति ने गुरु के बचन से क्रोध नहीं किया. दूसरी बहू भी वो इज्जत के खातिर लेने को गया और वहां जा कर इशारे से पत्नी को समझा कर शांत कर घर को ले आया लड़के भी हुए और उन लड़कों की उम्र बड़ी होनी पर एक लड़के ने बाप से पूछा कि आप सब जगह क्यों कहते फिरते हो कि क्षमा करना बहुत अच्छा है बापने उसे उसकी माता की बात कही, लड़का ने चकित होकर माता से पूछा माता ने उसी समय लज्जा के मारे प्राण छोड दिये पीछे विजय सेठ को बड़ा दुःख हुआ साधु के पास जाकर प्रायश्चित् मांगा गुरु ने कहा साधु हो जाना चाहिये सेठने पूछा परहित कैसे होगा गुरु ने समझाया कि साधु समान और परहित किसी से नहीं होता, सुन-

साधु देख के चले, बिचार के बोले, देख के गोचरी लेवे और खावे देख कर उपकरण (पात्र वगैरह) लेवे और रखे, और पेशाब मल थूंक वगै

रह ऐसी जगह पर डाले कि जिससे कोई भी जीव को पीडा न हो इसलिये कहा है कि जो मास मास में एक हजार गायों को दान देवे उससे भी अधिक पुण्य जो साधु कुछ भी नहीं देता है उसे साधु व्रत पालन से ही होता है क्यों कि साधुओं में कोई भी जाति की स्पृहा नहीं होने से वे हितोपदेश ही करते हैं और सभी जीव को रक्षा कर उनको सुमार्ग में ले जाते हैं इतना सुनकर विजय सेठ साधु हो गया इस लिये परहित गुण धारण करने वाला ही धर्म पा सकता है ।

श्रावक का २१ वा गुण लब्ध लक्ष्य

धर्मकृत्यों को अच्छी तरह समझ करके पालने में लब्ध लक्ष्य पुरुष योग्य होता है क्योंकि वो चतुर होता है, जिससे गुरु महाराज की थोड़ी भी बात उसे अधिक लाभदायी होती है, और गुरु महाराज के थोड़े प्रयास से और थोड़े समय में वो अधिकाधिक शास्त्रज्ञ होता है ।

आर्य रक्षक मुनि की कथा.

दशपुर नगर में सोमदेव ब्राह्मण की स्त्री रुद्र सोमा से आर्य रक्षित पुत्र हुआ वो पाटलि पुत्र में और दूसरी जगह पढ़ कर १४ विद्या का पारंगामी होकर आया. राजा ने और नगरवासियों ने उसका बहुत आदर किया घर में आने पर सब परिवार ने भी उसे मान दिया किंतु माता तो कुछ भी बिना बोले चुप रही तो भी माता के पास जाकर उसके चरणों में सिर झुकाकर बंदन किया, तब माता ने आशीर्वाद दिया किंतु विद्या का सत्कार का कुछ भी लक्षण न बताया, जिससे माता से पूछा कि मेरे पढ़ने पर और लोग इतना गौरव करते हैं और तू माता होने पर भी खुश नहीं होती उसका क्रिया कारण है, माताने कहा, हे वत्स! तू जो विद्या पढ़ा है उससे तू यज्ञ कराकर निर्दोष पशुओंकी धर्म के नाम पर हिंसा करावेगा और पाप बढ़ावेगा और भविष्य में दुर्गति में जावेगा इसलिये मुझे आनंद नहीं होता, पुत्रने कहा, अब मैं क्या करूं? माता बोली, स्वपर हित चिंतक जैन धर्मका और दूसरे धर्मोंका तत्व स्वरूप बताने वाला दृष्टि वाद अंग पढ़ जिससे सुगतिका भागी हो-

वे तो मुझे आनंद होवे, माताको पूछा, कि उसे कोन पढावेगा? माताने कहा तोशलिपुत्र नामके आचार्य तेरे इच्छुका गुड बनाने का घर में ठहरे हैं वहां जा, माताको कहा, मैं प्रभात में वहां जाकर पढ तेरे चित्तको प्रसन्न करूं गा. सूर्योदय के पहले ही उठ कर माताका आशीर्वाद लेकर चला रास्ते में शकुन भी अच्छे हुए, और उसका आगमन सुन एक मित्र इच्छुके सठि लेकर दूसरे गांव से देने को आयाथा वो सामने मिला लडके ने लेलिये गिने तो साठे नवथे. माताकी शांति के कारण उसने मित्रको वेही सठि अपनी माताको देने के लिये पीछेदिये और उस मित्र के साथ कहलाया कि मैं शुभ शकुन से जाता हूं जिससे मुझे दृष्टिवाद अंग पढने को मिलेगा, माताने भी इच्छु गिन कर निश्चय कियाकि पुत्र साडेनव पूर्व की विद्या पढेगा. आचार्य के पास जाने पर आर्य रत्नितने विचारा कि जैन साधु के पास मैं कभी नहीं गया तो वहां जाकर किस तरह बंदन करूं और क्या बोलुं? इतने में एक श्रावक बांदने को आया उसी के पीछे जाकर उसकी तरह उसके शब्द सुन कर बंदन किया किन्तु बडे श्रावक को बंदन करना वो दूसरा श्रावक न होनेसे प्रथम के श्रावकने नहीं किया इतनी बुद्धि आर्य रत्नित में देख कर गुरुने उसे वहेवार से अजान किंतु तीक्ष्ण बुद्धि वाला जान पूछा हे भद्र! धर्म प्राप्ति तूमे कहां से प्राप्त हुई है वो बोला, इस श्रावक से, गुरु-कब? वो बोला अभी ही. इस समय एक शिष्य जो गत दिन की बात जानता था उसने सब बात गुरुको कह सुनाई, गुरुने अधिक प्रसन्न होकर कहा हे भद्र! तूं राज्य मान पाचूका है, अब तेरा विशेष सत्कार क्या करे? वो बोला, मुझे आप दृष्टिवाद अंग पढावे ।

गुरु ने कहा कि संसार में जो विषय लोलुप (स्त्रादु) जीव हैं उससे वो नहीं पढा जाता इसलिये तू साधु होकर पढ वो बोला दीक्षा दो मैं साधु होता हूं आचार्य ने कहा सज्जदिकी आस्था चाहिये वो बोला मुझे क्षण काभी पढने में विलंब होवे सो अच्छा नहीं लगता ! मेरी माता ने मुझे पढने को भेजा है उसके उत्तम लक्षण व्यवहार और निपुण बुद्धि देख कर आचार्य ने दीक्षा दी उसका विशेष अधिकार आवश्यकदि सूत्रों से जानना

इस दृष्टांत से ज्ञात होगा कि उ० अर्थ रक्षितमें लब्ध लक्ष्य गुण था तो माता के आचरण की बात समझ विद्वान् और धर्म प्रेमी होगया इस तरह श्रावक धर्म पाने वाले में यह गुण होगा तो प्रत्येक कार्य थोड़े कष्ट में पार उतारेगा ।

ऊपर कहे हुये २१ गुणों का वर्णन सूत्रानुसार कह बताया है और जिसमें ये गुण हैं वो ही धर्म रत्न सुख से प्राप्त करेगा अर्थात् २१ गुण धारक पुरुष शीघ्र धर्म पासके हैं ।

२१ गुणों को वर्णन समाप्त

यदि किसीमें जो २१ गुण न हों तो वो धर्म पासके वानहीं इस वारे में कहते हैं कि यदि जो २१ गुण पुरे न हो तो जितने कम, इतने अंश में उसे कम लाभ मिलेगा १।४ चौथा हिस्सा कम हो तो मध्यम, और आधा होतो जघन्य, और उससे भी कम गुण होतो वो पुरुष कंगाल की गिनती में है, अर्थात् जैसे निर्धन रंक पुरुष इच्छा करे तो भी उसे लोकमें कोई रत्न नहीं देता अथवा वो खरीद नहीं कर सक्ता ऐसे ही गुण रहित पुरुष धर्म प्राप्ति नहीं कर सक्ता

इसलिये धर्म रत्न के अर्थियोंको प्रथम उपरोक्त २१ गुण प्राप्त करने का उद्यम करना चाहिये जैसे कि उत्तम जमीन में बोया हुआ बीज अधिक उत्तम फल उत्पन्न करता है तथा स्वच्छ भूमी में खेंचा हुआ चित्र अच्छी शोभा देता है ।

द्रष्टांत.

साकेत (अयोध्या) में महाबल राजा था उसने एक दूत से पूछा कि मेरे राज्य में सब वस्तु है वा नहीं दूत ने कहा कि एक चित्र सभा सिवाय सब वस्तु है, राजाने उसी समय मंत्री को कह कर एक बड़ा विशाल मकान चित्र सभा के लिये तैयार कराया और विमल और प्रभास नाम के दो चितारों को बुलाये दोनों चितारे आने पर दोनों मंडप में भिन्न भिन्न दोनों को बैठाये और परस्पर बिना देखे अपनी बुद्धि अनुसार उत्तमोत्तम चित्र बनाने का कहा, उन्होने

छै मास तक कार्य किया बाद राजा देखनेको आया बिमलके कियेहुए चित्रको प्रथम देखकर राजा प्रसन्न हुआ पीछे प्रभास के खंड में गया वहां पर कुछ भी चित्र न देखा तब राजा ने पूछा आपने इतने दिन क्या किया ! वो बोला हे नरेन्द्र मैंने प्रथम छै मास तक चित्र के लिये जमीन बैपार की है आप कृपा कर उसके पास जाकर देखो भीत में आप स्वयं अपना रूप बिना चितरे भी देखोगे. राजा ने वहां समीप जाकर देखा तो अपना प्रतिबिंब अच्छी तरह पडा देख आश्चर्य होगया क्योंकि राजा को संपूर्ण आभूषण वस्त्र के साथ संपूर्ण शरीर जैसे आयना में दीखता था वैसाही इस भीत में दीखता था चितारे की ऐसी सफाई देख बिना चित्र भी राजाने प्रसन्नता प्रकट कर इनाम दिया और कहा तेरे कृत्य की अधिक क्या तारीफ करूं ! चितारा बोला कि महा-राज ! अभी जमीन तैयार की है उसमें जो चित्र होंगे उसकी प्रभा अधिक होगी, और चिरकाल तक चित्र रहेंगे राजा बोला ठीक है जैसा योग्य लगे वैसा करो इस दृष्टांत से यह सूचित किया है कि श्रावक धर्म पाने वालें पुरुषों के हृदय में ऊपर के २१ गुण आ जावेंगे तो गुरु का उपदेश बिना भी गुरु के दर्शन से धर्म का स्वरूप जान जावेगा और थोडा बताने पर भी अधिक अधिक ज्ञान होता जावेगा ।

धर्म का स्वरूप ।

धर्म दो प्रकार का है (१) श्रावक धर्म (२) साधु धर्म ।

श्रावक धर्म के भी दो भेद हैं देशविरति, अविरति, श्रावक के और लक्षण भी शास्त्र में बताये हैं ।

अमूल्य मनुष्य जन्म पाकर सद्गुरु की शोध में रहकर धर्म स्वरूप अच्छी तरह समझकर यथा शक्ति व्रत पचक्खण कर सब संसारिक कार्य भी कोमल भाव से करे, ओर जीव अजीव का स्वरूप समझकर जीवों को न्यर्थ दुःख न होवे इस लिये अनर्थ दंड छोडे और अर्थ दंड में भी यतना से बर्त्तन करे जैसे अपनी रक्षा करे ऐसे और जीवों को भी पीडा न होवे इस तरह संभाल से चले ।

साथ साधु धर्म के लक्षण भी बताये हैं कि—

जो साधु होने वाला हो उसके मनमें निरंतर यह ख्याल रहे कि मनुष्य जन्म जैन धर्म, धर्म पर श्रद्धा और धर्ममें शक्ति (वीर्य) का उपयोग करना, वे चार बातें बहुत दुर्लभ हैं, उन चारों ही प्राप्त होने पर भी जो मैं प्रमाद करूंगा तो फिर इस दुनियां में अनेक जन्म मरण करने पर भी चारों बात एक साथ मिलना मुश्किल हो जावेगी इस लिये इंद्रियों के विषयों की सुंदरता बदलने में देर नहीं लगेगी और शरीर में अब शक्ति बुढ़ापा आ जाने पर धर्म पालना मुश्किल होगा इंद्र भी स्थिर न रहे तो मनुष्य आयु का क्या भरोसा है ? हीरा को छोड़ कांच के टुकड़े में कौन बुद्धिमान पुरुष राखेगा ! ऐसी वैराग्य भावना से बारंबार मुझे चरणों में शिर झुकाकर बोलता है हे गुरु ! हे तारक ! हे कृपा सिंधो ! भव भयसे डरा हुआ यह रंक अनाथ को चारित्र्य धर्म की शरण देकर जन्म जरा मरण रोगादि के भयों से बचाओ हे प्रभो ! सच्चे माता-पिता-नरेन्द्र रक्षक पालक पोषक तारक के सभी गुण आप में विद्यमान हैं । आप संसार दुःख सागर से मेरा उद्धार करो ? हे प्रभो ! चिंता मणि रत्न कल्प वृक्ष काम धेनु काम कुंभ जैसे चमत्कारी पदार्थों से भी मोक्ष नहीं मिलता, न जन्म मरण रोग के दुःख मिटते किंतु एक ही दुनियां में सब रोगों के भयों का और पीड़ाओं का मूल यह मेरा शरीर है जिसके भरोसे मैं आज तक बैठा रहा हूं उसीका प्रथम मोह छोड़ वीत राग भाषित तत्त्व ज्ञान संपादन कर उसी उदारिक शरीर के जरिये सब कर्म बंधों तोड़ने का प्रयास करूंगा इस लिये हे नाथ ! जहां तक जरा नाम की जम दूती आकर मेरे बाल धोले न बनावे, शरीर की इंद्रियों की शक्ति की क्षीणता न करे वहां तक मुझे आपका साधु भेष शीघ्र दो ! अहाहा ! वो क्षण कब आवेगी कि मैं जीवों को अभय दान देने वाला, सब जीवों पर मैत्री भाव रखने वाला और मुझे दुःख देने वाले जंतुओं पर भी सम भाव रखने वाला आत्म हित चिंतक लोह सुवर्ण में चंदन वांसी पर सम दृष्टि वाला राग द्वेष छोड़ वीत राग दशा में सकाम निर्जरा करने वाला होऊंगा ! इत्यादि कोमल भावना से आंख में आद्रता प्रकट करने वाला, पुनः पुनः चारित्र्य की प्रार्थना करने

वाला ही साधु धर्म के योग्य प्राणी बताया है, पीछे गुरु महाराज उसकी यथा योग्य परीक्षा कर साधु धर्म वा श्रावकधर्म देते हैं चाहे अष्टव्रत दें वा महा व्रत दें ।

श्रावक और साधुका संबंध.

जैन धर्म में स्याद्वाद मार्गका वर्णन है, अर्थात् जितनी अपेक्षाएँ जहाँ घटे वहाँ उतनी घटानी चाहिये. उसे स्याद्वाद कहते हैं. इस स्याद्वाद रीतिसे श्रावकके भिन्न भिन्न गुण बताये हैं. यहाँ पर साधु धर्मोपदेशक है और श्रावक उस धर्म के ग्राहक (लेने वाले) हैं उनका परस्पर क्या संबंध है वो बताते हैं—

स्थानांग सूत्र में लिखा है. कि—

(१) मात पिता समान, भाई समान, मित्र समान, शौक (=) समान—चार प्रकार के श्रावक होते हैं.

(२) साधुओं का चारित्र्य निमेल रहेगा तो वे सिद्धांत की अच्छी तरह पढ़ कर हमें लाभ देंगे इसलिये जैसे मात पिता रात दिन बैठे की प्रतिपालना करते हैं. उसी तरह साधुओं की रात दिन यथोचित भक्ति करे. वे मात पिता समान श्रावक हैं.

(३) भाई समय समय पर भाई की चिन्ता करे. और उसे सहाय दे इस तरह समय मिलने पर साधु की खबर लेकर उसकी यथोचित सेवा करे वे भाई जैसे श्रावक हैं.

(४) पर्व दिन में मित्र परस्पर मिल कर खबर पूछते हैं. ऐसे ही पर्व के दिनों में साधुओं की सेवा करें वे मित्र जैसे श्रावक हैं.

(५) सौक जैसे परस्पर छिद्रों को शोध और गुणों को छिपा कर उसको अपमान से खुश होता है वैसे ही साधुओं के गुणों को छूपा कर जरा भी भूल होने पर लोक में निंदा करे और साधु का अपमान करे वो सौक जैसा श्रावक है, यथा योग्य भक्ति कर अपनी शक्ति अनुसार से गुरु के पास धर्म सुन और आदरे वो उत्तम श्रावक है.

समय मिलने पर सेवा करे, धर्म सुने और करे वो मध्यम श्रावक है. पर्व दिन में जो सेवा करे, धर्म सुने और करे वो जघन्य श्रावक है. साधु के बारंबार जरा भी प्रमाद से दोष देख कर, उसका अपमान कर आप न धर्म कथा सुने, न सुनने देवे, बीच में विघ्न करे वो अधर्मी श्रावक है.

यहां पर कहने का यह है कि साधुमें दोष देखनेमें आवे तो विनयपूर्वक एकांत में कह कर सुधारना वो तो अच्छा है और गुणज्ञ साधु ऐसी बातों सुन कर सुधर जाता है और न सुधरे तो मिष्ट वचनों से पीछे श्रावक प्रकट भी कह सकता है और इतने से भी न सुधरे और अनाचार से दूसरों को पतित करे जैन धर्म की हीलना कगवे तो ऐसे साधु को श्री संघ (श्रावक धाविका साधु साध्वी) मिल कर उसे दूर भी कर सकते हैं किंतु अल्प दोष से बारंबार साधु का जाहिर अपमान करना अनुचित है—

साधु के उपदेश सुने इस अपेक्षा से चार प्रकार के श्रावक बताते हैं—

(१) गुरुने कहा वो संपूर्ण सुन कर हृदय में धार लेवे. वो आयना समान श्रावक है क्योंकि आयना में पूर्ण रूप पड़ता है. ऐसे ही वो श्रावक में धर्मोपदेश का पूर्ण असर होता है

(२) साधु के पास सुन फिर भूल जावे वो पताका समान, पताका (ध्वजा) पवन से बार बार हीलता है ऐसे ही वो श्रावक धर्म पा कर फिर फिर मिथ्यात्व में मूढ हो कर धर्म को छोड़ देता है.

(३) विनय न करे किंतु निंदा भीन करे और धर्म सुने किंतु करे नहीं वो स्थाणु (पेडका सूखा लकड़) माफक है.

(४) खरट्टक समान श्रावक उसे कहते हैं कि स्वयंशिथील (ढीला) होने पर भी अशुचि द्रव्य जरा ठोकर लगते उछल कर कपड़ा बिगाड़ता है. ऐसे ही वो श्रावक को जरा भी साधु उपदेश देवे कि दश बीस अनुचित शब्द सुनाकर साधु का अपमान कर धर्म नहीं पा सकता ।

ऐसे और भी दृष्टांतों से समझ श्रावक को प्रथम कुछ भी गुण प्राप्त करना चाहिये ।

भाव श्रावकके और लक्षण ।

व्रतकी मन में अभिलाषा रखे, सदाचारी होवे, गुणवान् होवे, निष्कपटी व्यापार करने वाला हो, गुरु भक्त हो, प्रवचन (शास्त्र) श्रवण में कुशल हो ये भाव श्रावक के लक्षण हैं ।

प्रथम गुरु की बात सुने, उसे समझे यथा शक्ति लेवे, उसे पाले, जो गुरुका विनय बहुमान कर सुने तो उसे अधिक ज्ञान हो सकता है जिससे श्रावक व्रत के बीभाग (भांगे) समजाते हैं ।

श्रानक व्रत के भांगे ।

मन वचन काया इन तीनों को जोग कहते हैं, न करुं, न करावुं वन अनुमोदुं इन तीनों को करण कहते हैं ।

जैसे कोई आदमी गुरु के पास धर्म समझ कर नियम करे कि मैं मन से जीव को न मारुं

(१) (अर्थात् मारने की मन में अभिलाषा न करुं.

(२) वचन से (अर्थात् वचन से मारुं ऐसा शब्द न बोले.

(३) काया से (अर्थात् हाथ वा शस्त्र से जीव के प्राण न लउं,

इस तरह

इ' मन वचन काया से न मरावुं.

इस तरह

उ मन वचन काया से मारने वाले को भला न जानुं.

इस तरह कोई मन वचन का भी लेवे वचन काया का भी लेवे अथवा एक काया का भी नियम लेवे ।

अथवा -

करण जोग

उत्तर गुण का भंगा

(१) २- ३-

सातवां होता है ।

(२) २- २-

और अविरित का आठवां होता है ।

(३) २- १-

और प्रत्येक के ६, ६, भंगे होते हैं ।

(४) १- ३-

(५) १- २--

(६) १- १--

२१ भंग इस प्रकार हैं ।

तीन जोग तीन करण से नव भंगे होवे. दो करण तीन जोग से ६ भांगे होवे. एक करण तीन जोग से छः भांगे होवे. इत्यादि अनेक भांगे होते हैं सिवाय सूक्ष्म बादर, त्रस स्थावर, संकल्प, आरंभ, सापराधी, निरपराधी के भेद भी समझने चाहियें ।

जीवों का किंचित् स्वरूप

जीव के दो भेद. संसारी और मुक्ति के-- संसारी के दो भेद त्रस स्थावर स्थावर के दो भेद हैं (१) सूक्ष्म (२) बादर, इन दोनों में पांच भेद हैं (१) पृथ्वी सूक्ष्म और बादर, (२) पानी सूक्ष्म और बादर (३) अग्नि सूक्ष्म और बादर (४) वायु सूक्ष्म और बादर (५) वनस्पति सूक्ष्म और बादर किंतु वनस्पति में और भी दो भेद हैं जैसे कि (१) प्रत्येक वनस्पति काय जिसमें गिन्ती के जीव हैं, (२) साधारण वनस्पति काय जिसमें एक शरीर में अनंत जीव हो-- उनका विशेष स्वरूप " जीव विचार " किताब से जुओ ये सब उपयोग में आते हैं किंतु सूक्ष्म हाथ में न आने से बादर का ही उपयोग होता है ।

और जीवों का स्वरूप समज ग्रहस्थ उसे बिना कारण उपयोग में नहीं लेते जैसे कि पेड के एक पत्ते से काम चलता हो तो दौ नहीं तोड़ना, एक तौड़े और उपयोग में ले तो वो अर्थ दंड है और दूसरा बिना कारण तोड़ फेंक देवे तो अनर्थ दंड होवे ग्रहस्थ को अनर्थ दंड अवश्य छोड़ना चाहिये.

त्रसकाय का स्वरूप ॥

त्रसकाय उसे कहते हैं कि जिनका शरीर मुंह हीलता दाखे और भय आने पर दूर भागे जिसका त्रास अपने देखने में आवे और अपने हृदय में कोमल भाव होवे कि उसे दुःख नहीं देना उसे त्रसकाय कहते हैं ।

- (१) दो इंद्रिवाले शरीर और मुंह वाले शंख, पेट के कमी (जोंख)
 (२) तीन इंद्रि, शरीर मुंह, नाक बाले, कीड़ी चेटे, अनाज के कीड़ों
 (३) चौइंद्रि " " " और आंख वाले डांस मच्छर पतंग बगैरह
 (४) पंचेंद्रि " " " " और कानवाले मनुष्य तिर्य
 च (पशु पक्षी) देवता नारकी जीव है ।

उन सब को वचाना अपना कर्त्तव्य है तो भी राज्याधीश कुनबा के अधिकारी वा ग्रहस्थी को स्वरक्षा के लिये दूसरे जीव को शिक्षा करनी पड़े तो भी जहां तक बने वहां तक उसे निध्वंस (दुष्ट) परिणाम से न मारे यदि राजा जो प्रजा के रक्षा के लिये दुष्टों को दंड न देवे तो अत्याचार और बदमाशों का जोर बढ़ जावे तो धर्म का नाश हो जावे तो भीतर से उसके दयालु होने पर भी उस के कृत्य से धर्म का नाश हो जाने से सजा महान पापी हो जावे इस लिये प्रजा के रक्षणार्थ उसे बदमाशों को दंड देना ही चाहिये किन्तु शत्रु शरण में आने बाद उसके पूर्वक वैर को याद कर उसे दंड नहीं देना चाहिये.

यहां पर इतना लिखना आवश्यक है कि जैन धर्म से प्रजा निर्माल्य होती है अथवा जैन धर्म का अधिक प्रचार से प्रजा की अवनति होगी ऐसा विचार कितनेक अन्य बंधुओंका है अथवा कितनेक जैनी भी अज्ञान दशा में ऐसा समझते हैं कि कीड़ी की दया पालने वाला शत्रु पर कैसे हाथ उठा सकता है उनको यहां पर सूचना है कि सर्व जीवों पर क्षमा करने वाले साधु भी दुष्ट राजा को समझाने पर भी न समझे तो योग्य कारण मिलने पर दंड देने का मोका आ जावे तो उसे साधु दंड देते हैं जैसे कि * कालकाचार्य की भगिनी जो साध्वी थी उसे गर्दभिल्ल राजा ने अपने महल में दुराचाराधर रखली थी उसको समझाने पर भी न मानने से कालकाचार्य ने उसे राज्य पर से दूर करा

*काल का चार्य की कथा राजेन्द्र अभिधान कोश प्रथम भाग ५८३ प्रष्ट में देखो—कोउ गट भिल्लो, कोवा कालग जो कम्मि काल सालितो भण्णति उज्जेणी णाम-णयरी, तत्थय गट भिलो णाम राया तत्थ कालगज्जाणम आयरिया जोतिस शिमित बलिया इत्यादि—नि-चू-१० उद्देशा.

कर साध्वी की शील की रक्षा की तो ग्रहस्थों को कोमल भाव रखने पर भी दुष्टों को दंड देना पड़ता है इस धर्म को व्यवहार धर्म कहते हैं और जो शरीर की भी परवाह न करे ऐसे निस्पृही साधुओं को योगी कहते हैं वे सिर्फ कर्मों को ही शत्रु मानते हैं उनको व्यवहार धर्म नहीं होने से वे निश्चय धर्म वाले हैं उनको शिष्य परिवार भी नहीं होता न वे उपदेश देवे न वे सुने न शेर से डरे न चंदन बिछू के दंश में भेद माने उनको छोड़ बाकी सब को अपना यथोचित व्यवहार धर्म मानना चाहिये जिससे जैन राजा राज्य कर सका है और साधुओं का धर्मात्माओं का रक्षण कर उनके धर्म का भागी होता है जिससे दुष्टों के दंड में जो पाप लगता है वो दूर हो जाता है किंतु उसे भी अपने प्रमाद की आलोचना करनी पड़ती है अनेक राजा पूर्व में हो गये हैं परंतु कुमार पाल को अधिक वर्ष नहीं हुए हैं उसका हिंदी चरित्र अवश्य पढ़ना चाहिये.

जैसे एक डाक्टर रोगीके हितार्थ उसका पैरमें घावकरे उसे दुःख देवे तोभी वोगुनह गार नहीं होसकता ऐसे राजाओंकाभी अधिकार है किन्तु डाक्टरको सांजवा प्रभातमें अपने दरदीओंका विचार करना पडता है कि मेरे प्रमादसे वा कम ज्ञानसे उसे अधिक दुःख तो नहीं दिया वा सोचकर उसका उपाय लेना ऐसेही राजा को भी प्रभात और शाम को अपने कर्त्तव्यों का ख्याल कर जो भूल हो गई हो तो उसकी क्षमा लेना चाहिये.

इस लिये चाहे राजा हो, वा रंक हो, पुरुष हो वा स्त्री हो ग्रहस्थ हो वा साधु हो उसे निरंतर प्रति क्रमण करना चाहिये प्रति क्रमण का अर्थ यह है कि अपने कर्त्तव्यों में जो भूल हो गई हो उसे याद कर उसका पश्चत्ताप कर दंड लेना और उसी से राजा भी अपने गुरु रखते थे कुमार पाल और गुरु हेम चन्द्रका चरित्र वांचने से मालुम होगा किस तरह उसे गुरु महाराज ने पाप से बचाया है।

राजा सदाचारी साधु अनाथ रंक का रक्षक और दुष्टोंका दंडक होता है वो राजा धर्म राजा कहलाता है जैसे युधिष्ठिर और राम हैं और जो राजा आप दुष्टता करे बिना कारण लड़ाई करे वो दुर्योधन का प्रत्यक्ष दृष्टांत है.

राजाओं की राज्य नीति जैनाचार्यों ने बनाई थी वो प्रचलित नहीं है जिससे अज्ञान दशा में चाहे ऐसा मूर्ख बोले किंतु अर्हन् नीति पढ़कर विद्वान् ऐसा विचार कभी न करेगा कि जैन धर्म से निर्बलता आती है । किंतु इतना समझेंगे कि यदि जैन धर्म बढ़ा तो आज युद्ध में जो अधम रीति से बंम गोलों का निर्दोष औरत और बच्चों का प्राण घातक अत्याचार हो रहा है वो मिट जावेगा क्योंकि जैन धर्म से कर्म फल को याद रख कर राजा को भी पीछे उस सब कृत्य का यथोचित फल भोगना पड़ेगा वो भूल नहीं जावेगा ।

श्रावकों के बारह व्रत का वर्णन ।

जैन धर्म में तीन रत्न मुख्य हैं, वे (१) सम्यग् दर्शन (२) ज्ञान और (३) चारित्र्य हैं ।

सम्यग् दर्शन दो प्रकार का है व्यवहार और निश्चय ।

व्यवहार दर्शन दूसरा भी जान सकता है, निश्चय सम्यक्त्व को केवल ज्ञानी जानते हैं कुछ अंश में अवधि ज्ञानी मन पर्यव ज्ञानी भी जानते हैं व्यवहार सम्यक्त्व देव गुरु धर्म को अंगीकार करने से होता है ।

(१) देव वीतराग निस्पृह केवल ज्ञानी हैं जिनको अर्हन् जिनेश्वर, तीर्थंकर नाम से कहते हैं (२४ तीर्थंकरके नाम लोगस में बोलते हैं उनका चरित्र पढ़ उनके गुण जान लेने) वीतराग सिवाय देव को कुदेव कहते हैं यदि कुदेव में देवपणा माने तो संसार में भ्रमण होता है ।

(२) गुरु साधु मुनि भ्रमण को कहते हैं वो भी त्यागी निस्पृही होते हैं यदि जो रागी को गुरु माने तो वो तार नहीं सका ।

(३) धर्म, दया, विवेक, और संवर, रूप हैं जो इन तीन गुण रहित हो तो वो धर्म के नाम से अधर्म है ।

जैसे अशक्त पुरुषको वैद उपकारक है ऐसेही ऊपर के तीन रत्न सामान्य पुरुष को हितकारक हैं इनके जरिये कम बुद्धि वाला भी सुबुद्धि वाला होकर आत्मा का और कर्म का संबंध जान सकता है पीछे आत्मा में दृढ विश्वास

वाला होने से उसे निश्चय चारित्र्य होता है जैसे नदी में तिरने वाला बड़ों की सहाय से तिरना सीख पीछे आप भी तैरू हो सक्ता है, इस लिये प्रथम व्यवहार सम्यक्त्व प्राप्त करने को ज्ञान पढ़ना चाहिये ।

ज्ञान के दो भेद ॥

जो ज्ञान पाठशाला में पढाते हैं वो ज्ञान भी कहलाता है और अज्ञान भी कहलाता है जो ज्ञान का उपयोग दूसरों के भले के लिये ही तो वो ज्ञान है और जो दूसरों का नुकसान करे तो वो अज्ञान है इस लिये ज्ञान पढ कर परमार्थ और परोपकार करना चाहिये ।

कोई पैसा गौ रोटी घर वगैरह देवे तो दान हो सक्ता है अथवा मीठे हित के बचन बोले तो भी दान हो सक्ता है किंतु ज्ञान पूर्वक जो समझ के दिया जावे तो सब से अधिक अभय दान है स्थावर त्रस जीवों को जो सदा बचावे तो संपूर्ण अभय दान होता है उसे साधु धर्म कहते हैं ऐसे ही चारित्र्य, महाव्रत, यम, संयम भी कहते हैं जो साधु न होवे अथवा उसे गुरु साधु न बनावे तो वो गृहस्थ धर्म ले सक्ता है, उसे देश विरति कहते हैं ।

उसमें बारह व्रत हैं ।

(१) जीवा सुहुमा थूला, संकप्पारंभा भवे दुविहा ।

सावराह निर व राहा, सावित्तरवा चेव निरवित्तरवा ॥

श्रावक से त्रस जीव की दया पले परंतु स्थावर की दया ने पले बारवार चूला जलावे, पानी उपयोग में आवे वनस्पति खावे मट्टी चूना के घर बनावे इस लिये पृथ्वी पानी अग्नि वायु वनस्पति को विना कारण दुःख न देवे विवेक से काम करे तो भी उनकी हिंसा होवे इस लिये २० हिस्सा दया हो तो त्रस का बचाव होवे स्थावर के १० हिस्से न पले ।

त्रस में भी अपराधी पर दया न रहे घर में चोरी, खून वा बदमाशी करने को कोई आवे तो उसपर शस्त्र चलाना पड़े अथवा राजा को प्रजाके रक्षणार्थ युद्ध करना पड़े तो निरपराधी की दया पले जिससे सिर्फ पांच हिस्से दया के रहै ।

सापेक्ष ॥

निरपराधी जीव भी जरूर पड़े तो मारना पड़े जैसे बच्चे के अंग में वा बैल को कीड़े पड़े हो तो दवा लगाने से वो मर जावे अथवा वाहन घोड़ा आदमी वगैरह को लड़ाई में ले जाना पड़े तो वे मरते हैं तो वे मरते हैं इस लिये उसकी दया न पली २॥ हिस्से रहें ।

आरंभ ।

खेती करने में बगैचा घर बनाने में बिना इच्छा भी कितने ही जीव मनुष्य के हाथ से मरे इस लिये सिर्फ १। हिस्सा की गृहस्थी को दया है ॥

जिससे ऐसी प्रतिज्ञा कर सके कि त्रस जीव जो निरपराधी हो तो बिना कारण संकल्प करके न मारें ।

श्रावक का दूसरा व्रत झूठ न बोलना ।

वर वा कन्या के झूठे दोष वा झूठे गुण बताकर किसी का विवाह बिगाड़ना वा फसा देना ऐसा ही पशु बैल वगैरह में झूठ बोलना, अथवा जमीन की बिक्री में झूठ बोलना, किसी की थांण लू झूठ बोलना (५) झूठी साक्षी पूरनी ये पांच बड़े झूठ अवश्य छांडने, सिवाय अप्रिय सत्य भी स्वास कारण बिना न बोले, मार्मिक वचन न बोले ।

(३) चोरी न करना ।

मालिक की बिना रजा चीज लेनी, उसे चोरी कहते हैं दमड़ी से लेकर रुपया वा रत्न तक हो तो भी वो बिना आज्ञा न लेनी, यदि रास्ता में चीज मिले तो भी उसे नहीं लेनी वो तीसरा व्रत है किंतु चोरों के साथ सांबत रख उसे सहाय देवे तो भी चोरी का दोष लगता है राज्य विरुद्ध कृत्य भी नहीं करना अच्छी बुरी नई पुरानी चीज नहीं मिलानी. कूड़े तोल माप भी नहीं रखना श्रावक को नीति से व्यवहार रखना चाहिये ।

(४) स्वदारा संतोष मैथुन त्याग वृत्ति ।

अपनी स्त्री छोड़ सर्व स्त्रियों का संग न करना चाहे कन्या रंडी, विधवा हो तो भी जहाँ तक नैबिक रीति से स्थादी न हो वहाँ तक संबंध करना न चाहिये अपनी स्त्री भी छोटी वा गर्भ के चिन्ह वाली, बीमार वा पुरुष स्वयं बीमार हो तो संग न करे, पर्व तिथि को अपनी स्त्री में भी ब्रह्मचर्य पाले ।

(५) परिग्रह परिमाण व्रत ।

घर का निर्वाह अच्छी तरह इज्जत पूर्वक चले उससे अधिक की तृष्णा न करे किंतु पूर्व के पुण्य से यदि आ जावे तो दान में लगा देवे इतना संतोष न रहे तो नियम करे कि इतने से ज्यादा हो तो व्योपार बंद करूं वा धर्म में लगा दूं अथवा रोज की कमाई से इतना हिस्सा धर्म में लगा दूं और इन नव चीज का परिणाम करना ।

(१) धन, (२) धान, (३) जमीन, (४) मकान, (५) चांदी, (६) सुवर्ण (७) और सब धातु, उसे कुपद की संज्ञा है, (८) नोकर (९) पशु बैल वगैरह.

• श्रावक का छठा व्रत दिशि परिमाण

उत्तर दक्षिण पूर्व पश्चिम ऊंचे और नीचे इन ६ दिशा और चार कोण मिल कर १० होते हैं. उन दिशाओं में घर व्योपारार्थ जाने का नियम करना और श्रावक को वर्षा रतु में इतनी जगह में भी बिना कारण न जाना. इस से पूर्व के पांच व्रतों को गुण होता है. अर्थात् हिंसा वगैरे भिड़ जाती है. इस लिये जो नियम लेवे वो नोंध कर लेवे कि भूल से भी अधिक न जावे.

श्रावक का सातवां व्रत भोगोपभोग विरमण व्रत

३२ अभक्ष्य का त्याग भोजन भोग और व्योपार का परिमाण करना ३२ अनंत काय छोड़ना, और सचित वस्तु का परिमाण करना, रोज १४ नियम धारना, पंद्रह कर्मा दाम छोड़ना वा का करना,

दूसरी विज्ञप्ति यह है कि जिन चीजों में ज्ञानि महाराज ने ज्ञान सेदेख के बहुत ज्यादा दोष बताये हैं उन चीजों को छोड़ना उचित है।

१ विदल जिस अन्न की दो दाल (द्विदल) हो जाय, और जिसमें से तेल नहीं निकले, उस अन्न को कच्चे दूध, दही, छाश के साथ अलग अथवा मिलाय के खाना बड़ा दोष कहा है। दही बगैरह खूब गरम करके साथ खाने में विदल का दोष नहीं है।

२ आचार (आधाना) सब तरह का (संधान) ३ रोज बाद अभक्ष्य हो जाता है। और शरवत व मुरब्बे का भी दिनों का प्रमाण करना चाहिये।

३ कंद मूल ३२ अनन्तकाय, यह सबसे ज्यादा दोष की चीज होनेसे बिल कुल छोड़ने लायक है।

२२ अभक्ष्य के नाम

१ बडके, २ पीपलके, ३ पिलखणके, ४ काठंबरके, ५ गूलरके फल, ६ मदिरा, ७ मांस, ८ मधु, ९ मक्खन, १० बरफ, ११ नशा, १२ ओले १३ मट्टि, १४ रात्री भोजन, २ बहु बीजा फल, १६ संधान (आचार) १७ द्विदल, १८ वेंगण, १९ तुच्छ फल, २० अजान फल, २१ चलित रस, २२ बर्त्तिस अनन्तकाय।

३२ अनन्तकाय के नाम

सूरनकन्द १ वज्रकन्द २ हरिहलदी ३ सितावरी ४ हरा नरकचूर ५ अद्रक ६ विारयालीकन्द ७ कुंवारी-गुंवारपाठा ८ थोर ९ हरि गिलोय १० लस्सन ११ बांस करेला १२ गाजर १३-१४ लुनियां और लुडियां की भाजी १५ गिरिकर्णिका १६ पत्तेके-कुंफल १७ खरसुआ १८ थेगी १९ हरामोथा २० लोणसुखबली २१ बिलहुडा २२ अमृत-वेलि २३ कांदा-मुला २४ छत्र टोप २५ विदलके अंकूर २६ वथवे की भाजी २७ बाल २८ पालक २९ कुली आमली ३० आलू कन्द ३१ पिडालू ३२

॥ रात्रि भोजन सर्वथा न छूट सके तो दुबिहारतिविहार पचचल्साण करना आवश्यक है

२२* अभक्ष्य श्रावक को जरूर ही छोड़ना चाहिये न छूटे तो जितना छूटे उतना छोड़िये। थोड़े से जिन्हा के स्वाद के वास्ते जीव पाप से भारी होकर भव भव में बहुत दुख पावे ऐसा नहीं करना चाहिये। इनसे ज्यादा स्वादकी और चीजें बहुत हैं।

सात वा व्रत विचार कर के हमेश के लिये भी लेना और रोज के लिये भी १४ नियम यथा सक्ति लेना ।

चौदह नियम धारने की विधि

दिनके चार प्रहर के नियम सबेरे मुंह धोने के पहिले विचार के शामको पार लीजिये. रात्रि के चार प्रहरके फिर शामको विचारके सुबह पार लीजिये, नियम तीन नवकारागिन के लीजिये, और तीन नवकार गिन के पारिये, पारने के वख्त ज्यो ज्यो रक्खा था उसको याद करके संभाल लीजिये, कमती लगा उसका लाभ हुआ, भूल से जास्ती लगा उसका “ मिच्छामिदु-क्कडं ” दीजिये. चाहे तो आठ प्रहर के भी धार सकते हैं परंतु चार प्रहर के धारने से पारने के वख्त (कितना नियम धारते वख्त रक्खा है और कितना भोग में आया है उसकी,) विधि मिलाने में सुगमता रहती है ।

कोई ब्रतधारी श्रावक जन्म भर के निर्वाह के वास्ते जादे जादे वस्तु रखते हैं तो १४ नियम धारने से उनका भी आश्रव संक्षेप हो जाता है इस स्वात्ते ब्रतधारी को और अविरति को अवश्य १४ नियम धारने चाहिये ।

चौदह नियमों की गाथा ।

सचिच्चं द्रव्यं विगम्यं । वाणहं तंबोर्ल वत्थं कुंसुमेसु ॥
वाहणं सयणं विलोवणं बंभं दिसि^१ न्हाणं भत्तेसु ॥ १ ॥

गाथा का संक्षिप्त अर्थ ।

- १ सचिच्च (जिस्मेजीव सत्ता हो, बोने से जगे बीजादि) कच्चा पानी, हरी शाक फल, पान, हरा दातन, निमक आदि ।
- २ द्रव्य—जितनी चीज मुंह में जावे उतने द्रव्य—जल, मंजन, दातन, रोटी, दाल, चावल, कढ़ी, सान, मिठाई, पूरी, घी, पापड पान, सुपारी, चूरन, मसाला आदि ।
- ३ विगम्य—१०. जिनोंमें से मधु मांस, माखन, और मदिरा ये ४ महा विगम्य अभक्ष्य होने से, श्रावक को अवश्य त्याग करने चाहिये और (६)

श्रावक के खाने योग्य, है, घी, तेल, दूध, दही, गुड खांड अथवा मीठा पक्वान्न और कड़ाई में भरे घी में तला जाय वह ।

४ उपानह—जूता, बूट, स्लीपर, मोजा आदि (जो पांव में पहने जाय) ।

५ तंबोल—पान, सुपारी, इलायची, लोंग, पान का मसाला आदि ।

६ *वस्त्र (वस्त्र) पगड़ी, टोपी, शाफा अंगरखा, चुगा, कुरता, धोती, पायजामा, दुपट्टा, चद्दर अंगोछा, रुमाल आदि मरदाना और जनाना कपड़ा (जो ओढ़ने पहनने में आवे) ।

७ कुसुमेसु—फूल, फूलकी चीज जैसे सिङ्गिया, पंखा, सहरा, तुरी, हार, गजरा अंतर (जो चीज सूंघने में आवे) ।

८ वाहन (सवारी)—गाड़ी, फेरीन, सिगराम, हाथी, घोड़ा, रथ, पालखी, डोली, मोटर, साईकल, रेल, ट्राम्वे नाव जहाज, स्टीमर, बलून आदि याने बरता, फिरता, चरता और उड़ता ।

९ शयन—खुरशी, टेबल पट्टा, पलंग, गादी, तकिया, बिछोना, तखत, मेज, सुखासन आदि (सोने वा बैठने की चीजें) ।

१० विलेपन—तेल, केसर, चंदन, तिलक, सुरमा, काजल, उबटना, हजामत, बुरश, कंगा, काच देखना दवाई आदि (जो चीज शरीर में लगाई जावे) ।

११ बंध (ब्रह्मचर्य) स्त्री, पुरुष ने, सुइ डोरे के न्याय से तथा बाह्य बिनोद की संख्या कर लेनी श्रावक घरदारा त्याग और स्वदारों से ही संताप रखें, उसका भी प्रमाण कर इसी प्रकार स्त्रीओं को भी समझना चाहिये ।

१२ दिसि (१० दिशा)—शरीर से इतने कोस (लंबा, चौड़ा, ऊंचे नीचे) जाना आना, चिंठी तार इतने कोस भेजना, माल और आदमी, इतने कोस भेजना, तथा मंगाना ।

१३ न्हाण (स्नान)—शरीर में मोटा स्नान इतनी बेर करना (छोटास्नान) हाथ पैर इतनी बेर धोना ।

१४ भक्तेसु—*अशन, पान, खादिम, स्वादिम ये चारों आहारमें से खाने में जितनी चीजें आवे सबका कुल वजन इतना ।

ये १४ नियम के ऊपर ६ काय और ३ प्रकार के कर्म की मर्यादा विचारनी आवश्यक है ।

६ काय ।

- १ पृथ्वीकाय—मट्टी, निमक, आदि (खानेमें उपभोग में आवें)
उसका वजन ।
- २ अक्काय—जो पानी पीने में वा दूसरे उपयोग में आवे उसका वजन*
- ३ तेजकाय—चूल्हा, अंगीठी, भट्टी, चिराग आदि का प्रमाण ।
- ४ वायुकाय—हिंडोले और पंखे (अपने हाथ से वा हुकम से) जितने चलते होंवे उनकी संख्या का प्रमाण. रुमाल से वा कागज से हवा लेनी यह भी पंखे में गिनी जाती हैं, उसकी जयणा ।
- ५ वनस्पति काय हरा शाक तथा फलादि इतनी जात के खाने, घर संबंधी मंगाने, जिसकी गिनती तथा वजन ।
- ६ त्रसकाय—त्रसजीव अपराधी, बिनापराधी का विचार करना
यह ६ काय का परिमाण करलेना ।

कर्म.

- १ असी—(शस्त्र और औजार). तलवार, बंदूक, तमंचा, बरछी, भाला, आदि छूरी, कैंची चक्कु, और सरोता, चिमटी आदि औजार.
- २ मसी (लिखने पढ़ने का.) कागज, कलम, दावात, पेन्सिल, बही, पुस्तक, छापा, टाइप, आदि.
- ३ कृषी—(कसी).
खेती बगीचे आदि का परिमाण.
अब रोजके नियम धारनेकी विधि संक्षेपसें लिखते हैं, विस्तार जितना अधिक करिये, यानि नाम खोल खोल कर रखिये उतनाही जादे फायदा है. यदि अमकाश कम हो तो नीचे लिखे मुजब धारीए.

संक्षिप्त विधि.

कलके १४ नियम चितारेथे उसमें कमती लगा होय उसका लाभ होवे; अजाणमें जास्ती लगा होय उसका मन बचन काया करके “ मिच्छामि दुक्क-डं ” यह कह कर तीन नवकार गिनके पार लो.

नियम लेनेकी विधि.

दिनको, शुबेहसे १४ नियम नीचे लिखे मुवाफिक शामके ४ पहरतकके रख लीजिए.

बाकी—का त्याग होगया, तीन नवकार गिनकर जिनके पञ्चस्वखाण कर लीजिये और जो पञ्चस्वखाण करना होवे नवकारसी अथवा ज्यादा उसका पाठ कहके देसावगासी और विगयका पाठ कहलेना तथा गुरुमहाराजसे भी पञ्चस्वखाण करलेना. अब दिन भरमें जोजो उपभोगमें आया होवे उसकी विधि शामको मिला लेनी, फिर तीन नवकार गिनके पार लीजिये.

रातके नियम ४ पहरके इसी रीतिसें चितार लीजिये, सवेरे मूंह, धोनेके पहले उसी रीतिसें पारके फिर धार लीजिये. यदि आठ पहरके नियम करे तो रात दिनकी चीजें साथही धारलेनी, विगत—(संख्या*)

* जिसको जितनी जरूरतहो उतनी चीजोंकी संख्या ब्रेकेटमें लिखलेनी ताकी धारनेमें सुभीता रहे.

- १ साचित्तमें () जात. वजन शेर ()
- २ द्रव्यमें () जितने मूंहमें जावे उनकी संख्याका नियम कर लेना.
- ३ विगयमें () जो छोडो उनके नाम खोल लेना.
- ४ बाणहमें जूते जोडे बूटजोडी () स्लीपर जोडी () मोजे जोडी ()
- ५ तंबोलमें पानकी बीडी () इलायजी, सुपारी आदि तोले ()
- ६ वत्थमें () बस्त्र () आभूषण ()
- ७ कुसममें फूल सेर ()
- ८ बाहनमें () तरते () फिरते () उडते () चरते.
- ९ सयनमें () जगेके जो लमे, आना, आना, बेठना. () मकान,

- और दुकान, () बगीचे, () जाजर, () मोरी. ()
- १० बिलेपनमें () जातका सेर. ()
- ११ बंभमें परदार और परपुरुषसें अब्रह्मचर्यका त्याग. इतनी बेर () स्त्री वा पुरुषसें संबंध करना. ब्राह्म विनोदकी जयणा.
- १२ दिशिमें शरीरसें () कोस जाना आना. चीन्ही तार तथा माल भेजना मंगाना () हजार कोसतक. छापेकी जयणा.
- १३ न्हाणमें () मोटे, () छोटे स्नान.
- १४ भत्तेसुमें खानेको सेर () पीनेका पानी सेर () दुध, सरबत आदि () सेर.
- १५ पृथ्वीकायमें मट्टीनमक सेर ()
- १६ अग्निकायमें पानी मन () (न्हाणे पीनेमें).
- १७ तेजकायमें () जगहके चून्हे, अंगीठी, भट्टी, () चिराग. () मंदिर, सड़क वा दूसरी जगहके चिरागकी जयणा.
- १८ वायुकायमें, पंखे () दूसरेके घरकी जयणा.
- १९ वनस्पतीकायमें () जातकी सेर () खानेको.
- २० त्रसकायमें चलते जीवको मारनेकी बुद्धि करके मारे नहीं. मन करके उपयोग सहित निरपराधीको मारे नहीं.
- २१ असीमें () शस्त्र वा () औजार.
- २२ मसीमें () लिखने पढ़नेका चीजें. () कलम, दोवात आदि.
- २३ कृषीमें खेतीविद्या () बाकी त्याग, बगीचेकी जयणा.

अगर कोईको जादे कमती रखना होय तो इच्छा मुजब रखिये, यदि नाम खोलके विस्तारसे रखिये तो ज्यादा लाभ है. परंतु जितना रखिये उसमें दोष नहीं लगावे, भूल चूकसें अतिचार लगजाय तो कमसें कम १० नवकारका दंड लीजिये, और ३० द्रव्य रखे थे और ३१ लगे तो दूसरे दिन २६ रखिये.

भावक का आठवां व्रत अनर्थ दंड त्याग.

अपने उपयोग में जो वनस्पति वगैरह आवे उसे लेना वो अर्थ दंड है बिना प्रयोजन वा जादह लेवे वो अनर्थ दंड है छत्तेरयाओं का दृष्टांत विचार

यथा शक्ति मन वचन काया से दूसरे जीवों की रक्षा करनी, औरतें गालियें गाबे, पुरुष होली के दिन में अप शब्द बोले वा हांसी करना पाप का उपदेश देना वा टंटा कराना क्लेश बढ़ाना परस्पर निंदा लेख ट्रेक्ट पुस्तक निकाल समय धन बुद्धि व्यर्थ करना पैसे बालों की ईर्ष्या करना गुणवानों का बेप करना बिना कारण समिति और तीन गुप्ति न पालना ।

जैसे कि दूसरा रास्ता होने पर भी हरी पर चलना, चले २ पुस्तक वा पत्र पढ़ना अंग्रे में बैठ खाना बिना विचारे चाहे वहां टट्टी जाना पिशाच करना थूकना कूड़ा फेंकना बिना कारण आर्त रौद्र ध्यान करना, अधिक बोलना, शरीर से दूसरों को बिना कारण दुःख देना ऐसे अनेक पर पीढक कृत्य अनर्थ दंड में हैं उसे छोड़ना चाहिये ।

चारशिखा व्रत.

सामायिक में दो घड़ी तक स्थिर बैठ जाप वा धर्मशास्त्र का पठन वा पाप का पश्चात्ताप करना प्रभात और शाम को प्रतिक्रमण में छ आवश्यक होते हैं उसमें प्रथम सामायिक है दुपहर वा रात को भी सामायिक हो सक्ता है धर्म शास्त्र पठन का यह उत्तम रास्ता है किन्तु यह दो घड़ी (४८ मिनिट) का चारित्र है इसलिये साधु की तरह यह पालना चाहिये और सामायिक व्रतका शाठ उचरना चाहिये.

सामायिक पाठ ।

(उसकी विधि अर्थ साथ किताब अलग छप चुकी है ।)

करेमि भंते सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चखामि जाव नियमं पज्जु वासामि इविहं ति विहेणं मणेणं बायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं बोसिरामि ।

इस पाठ में यह बताया है कि दो घड़ी तक मन वचन कायासे पाप व्यापार न करूंगा न कराऊंगा और भूल से हो जावे तो उसकी निंदा गद्दी कर आत्मा को पाप से रोडूंगा ।

श्रावक का दशवां व्रत देशावकाशिक ।

देशावकाशिक व्रत छठा व्रत का ही संबंधी है. पाप व्योपार छोड़ने को जो दिशि परिमाण जीवित पर्यंत के लिये किया है उसे एक रात वा दिन रात में संकोच कर बैठ उस समय धर्म ध्यान करना किंतु ध्यान यह रखना कि आप दूसरों को भी उस परिमाण से बहार न भेजे और आप साधु की तरह निरवद्य धर्म व्योपार में रहे पढ़े गुणे ।

श्रावक का ११ वा व्रत पौषध ।

(पौषध की विधि अलग छप चुकी है वो देखो ।)

पौषध व्रत से चारित्र्य का अभ्यास, धर्म की पुष्टि और समय का सहुप योग मुक्ति के लिये होता है साधु की तरह एक रात, दिनका पचखाण होता है देशा व काशिक से उसमें अधिक यह है कि पौषध में उपवास वा आंवील वगैरह तप भी करना पड़ता है किया भी करनी पड़ती और है दश सामायिक करके भी देशा व काशिक व्रत करने की परिपाटी है पीछे घर भी जा सका है. और पौषध में तो वहां ही बैठना पड़ता है. दिन में स्थंडिल जाना होता साधु की तरह बहार जा सके । मंदिर में भी जा सके किंतु द्रव्य पूजा न कर सके यह पौषध पर्व तिथि में होता है ।

श्रावक का १२ अतिथि संविभाग व्रत है ।

यह व्रत पौषध के दूसरे दिन एकाशना पका पचखाण करके साधु वा साध्वी को आहार देकर जो साधु चीज लेवे वो ही उस दिन एकाशना में वापरे जो साधु साध्वी न हो तो जीवित पर्यंत का ब्रह्मचर्य जिसने लिया हो उसे जिमा कर आप स्नावे वा मंदिर में नैवेद्य चढ़ा कर भोजन करे ।

श्रावक के १२ वां व्रत समाप्त ।

(संलैखना)

जो आयु की मालुम होवे तो श्रावक संलेखना करे, और आहार छोड़े और निराकांची हो मुक्ति में हृद भावना रखे आज के समय में आयु की मालुम न होने से यह परिपाटी नहीं है तो भी एक एक दिन वा एक एक कलाक का पञ्चखाण कर सकते हैं किन्तु रोगी के पास बैठने वाले आदमी को हर समय उपयोग रखना चाहिये ।

श्रावक के योग्य तपश्चर्या ।

बाह्य तप प्रकारका तप है १ उपवास, २ उणोदरी, ३ वृत्तिसंक्षेप, ४ रस त्याग, ५ काय क्रेश ६ संलीनता, अर्थात् बिल्कुल न खाना वा दिन में सिर्फ फासु पानी पीना आंबील वा एकाशना करना कम खाना भिन्न भिन्न वस्तुएं कम खानी, दूध दही बगैरह न खाना काया का दुःख सहन करना, शरीर स्थिर रखना ।

आभ्यं तर तप ।

पाप होगयाहो उसका गुरु पास प्रयाश्रित लेना, बड़ों का विनय करना, बीमारों की सेवा और गुणवानों की भक्ति करना पढ़ना पढ़ाना फिर स्मरण करना धर्म कथा कहना ध्यान करना काउसगग करना ।

उसके बारे में दो गाथा याद करनी ।

अणसण मुणोअरिया वित्तिसंखेवणं रसच्चाओ कायकिलेसो संलीण याअवज्झो तवोहोइ (१) पायच्छित्तं विणओ वेआवच्चं तहेव सज्झाओ ज्ञाणं उसग्गोविअ अर्पितर तवोहोइ २ ।

वीर्याचार का वर्णन ।

जितनी धर्म क्रिया करनी उसमें प्रमाद छोड़ना और विधि अनुसार यथा शक्ति करना ।

श्रावक के १२ व्रतों दिक १२४ अतिचार हैंसो हिंदी भाषा में नीचे लिखे हैं ।

॥ अथ पाक्षिक अतिचार ॥

“ नाणांमि दंसणंमि अ, चरणंमि तवंमि तहय विरियंमि ।

आयरणं आयारो, इअ ऐसो पंचहा भाणिओ ॥ १ ॥”

ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार, इन पाँचों आचारों में जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

तत्र ज्ञानाचारे आठ अतिचार ।” काले विणए बहुमाणे, उवहाणे तहय निन्हवणे । वंजण अत्थ तदुभए, अट्ठविहो नाण मायारो ॥ २ ॥

ज्ञान नियमित वक्त में पढ़ा नहीं । अकाल वक्त में पढ़ा । विनय रहित, बहुमान रहित, योगोपधान रहित पढ़ा । ज्ञान जिससे पढ़ा उससे अतिरिक्त को गुरु माना या कहा । देववन्दन, गुरुवन्दन करते हुए, तथा प्रतिक्रमण, सभाय पढ़ते अशुद्ध अक्षर कहा । लगमात्र न्यून/अधिक कहा । सूत्र असत्य कहा अर्थ अशुद्ध किया । अथवा, सूत्र, अर्थ दोनों असत्य कहे । पढ़कर भूला । असभाई के समय में थविरावली, प्रतिक्रमण, उपदेश माला आदि सिद्धांत पढ़ा । अपवित्र स्थान में पढ़ा या बिना साफ किये घृणित भूमीपर रखा ज्ञान के उपकरण तखती, पोथी, ठबणी, कवली, माला, पुस्तक रखनेकी रील, कागज, कलम, दवात आदिके पैर लगा, थूक लगा अथवा थूक से अक्षर मिटाया, ज्ञान के उपकरण को मस्तक के नीचे रखा, अथवा पास में लिए हुए आहार निहार किया, ज्ञान द्रव्य भक्षण करने वाले की उपेक्षा की, ज्ञान द्रव्य की सार संभाल न की, उलटा नुकसान किया ज्ञानवत के ऊपर द्वेष किया, ईर्ष्या की, तथा अवज्ञा आशातना की किसी को पढ़ने गुणने में विघ्न डाला, अपने जानपने का मान किया । मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान मनःपर्यवज्ञान और केवल ज्ञान इन पाँचों ज्ञानों में श्रद्धा न की । गूंगे तोतले की हांसी की । ज्ञान में कुतर्क की, ज्ञान की विपरीत प्ररूपणा की । इत्यादि ज्ञानाचार संबंधी जो कोई अनाचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामिदुक्कडं ॥

दर्शनाचार के आठ अतिचार—“निस्संकिय निःकंखिय, निव्विचि गिच्छा अमूढ दिट्ठी अ । उववूह थिरी करणे, वच्छलप्पभावणे अट्ठ ॥ ३ ॥

देव गुरु धर्म में निःशंक न हुआ । एकांत निश्चय न किया । धर्म संबंधी फल में संदेह किया साधु साध्वी की जुगप्सा निंदा की । मिथ्यात्वियों की पूजा प्रभावना देखकर मूढदृष्टिपना किया । कुचारित्रों को देखकर चारित्र्य वाले पर भी अभाव हुआ । संघ में गुणवान की प्रशंसा न की । धर्म से पतित होते हुए जीव को धर्म में स्थिर न किया । साधर्म्य का हित न चाहा । भक्ति न की । अवमान किया । देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य, साधारण द्रव्य की हानी होते हुए उपेक्षा की । शक्ति के होते हुए भली प्रकार सार संभाल न की । साधर्म्य से कलह क्लेश करके कर्म बंधन किया । मुखकोश बांधे बिना भगवत् देव की पूजा की । धूपदानी, खस कूची, कलश आदिक से प्रतिमाजी को उपका लगाया । जिनबिंब हाथ से छूटा । श्वासोच्छ्वास लेते आशातना हुई । मंदिर तथा पौषधशाला में धूका, तथा मल श्लेष्म किया, हांसी मश्करी की कतूहल किया । जिन मंदिर संबंधी चौरासी आशातना में से और गुरु महाराज संबंधी तेतीस आशातना में से कोई आशातना हुई हो । स्थापना चार्य हाथ से गिरे हों, या उनकी पडिलेहण न हुई हो गुरु के वचन को मान न दिया हो इत्यादि दर्शनाचार संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कं ॥

चरित्राचार के आठ अतिचार ॥ “ पणिहाण जोग जुत्तो पंचहिं समिइहिं तिहिं गुत्तिहिं । एस चरित्तायारो, अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ ४ ॥

इर्या समिति, भाषा समिति, एषणा समिति, आदान भंडमत्त निक्षेपणा समिति पारिष्ठपनिका समिति मनोगुप्ति, वचनगुप्ति यह आठ प्रवचनमाता सामायिक पौषधादिक में अच्छी तरह पाली नहीं, चारित्र्याचार संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कं ॥

विशेषतः श्रावक धर्म संबंधी श्रीसंन्यक्त्व मूल बारह व्रत संन्यक्त्व के पांच अतिचार ॥

“ संका कंखा विगिच्छा ” शंका-श्रीअरिहंत प्रभु के बल अतिशय ज्ञान लक्ष्मी गांभीर्यादिगुण शाश्वता प्रतिमा चारित्रवान के चारित्र में तथा जिनेश्वर देव के वचन में संदेह किया । आकांक्षा-ब्रह्मा, विष्णु, महेश, क्षेत्रपाल, गरुड, गूगा, दिक्पाल, गोत्रदेवता, नवग्रह पूजा गणेश, हनुमान, सुग्रीव, वाली, माता, मसानी, आदिक-तथा देश नगर ग्राम गोत्र के जुदे जुहे देवा दिकों का प्रभाव देखकर शरीर में रोगातंक कष्टादि के आने पर इस लोक पर लोक के लिये पूजा मानता की । बौद्ध सांख्यादिक संन्यासी, भगत लिंगिये, जोगी, फकीर पीर इत्यादि अन्य दर्शनियों के मंत्र यंत्र चमत्कार को देख कर बिना परमार्थ जाने मोहित हुआ । कुशास्र पड़ा । सुना, श्राद्ध संवत्सरी, होली, राखड़ापूनम-राखी, अजा एकम, प्रेत दूज, गौरीतीज, गणेश चौथ, नाग पंचमी, स्कंदषष्ठी, भीलगा छठ उभछठ, सील सत्तमी, दुर्गा अष्टमी, राम नौमी, विजिया दशमी, व्रत एकादशी, वत्सद्वादशी, धन तेरस अनंत चौदस, शिव रात्रि, कालि चौदस, अमावास्या, आदित्यवार उत्तरायण योग भोगादि किये कराये करते को भला माना पीपल में पानी डाला डलवाया कुआ तलाव नदी द्रव बावड़ी समुद्र कुंड ऊपर पुण्य निमित्त स्नान तथा दान किया कराया अनुमोदन किया ग्रहण शनिश्चर माघमास नव रात्रिका व्रत किया अज्ञानियों के माने हुए व्रतादि किये कराये वितिगिच्छा-धर्मसंबंधी फल में संदेह किया । जिन वीतराग अरिहंत भगवान धर्म के आगार विश्वोपकारक सागर मोक्ष मार्ग दातार इत्यादि गुण युक्त जानकर पूजा न की इसलोक परलोक संबंधी भोग वाञ्छा के लिये पूजा की रोग आतंक कष्ट के आने पर क्षीण वचन बोला । मानता मानी महात्मा महा सती के आहार पानी आदि की निंदा की मिथ्या दृष्टि की पूजा की पूजा प्रभावना देख कर प्रशंसा की प्रीति की । दाक्षिण्यता से उसका धर्म माना । मिथ्यात्व को धर्म कहा । इत्यादि श्रीसम्यक्त्वव्रत संबंधी जोकोई अतिचारपक्ष दिवसमें सूक्ष्मया वादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामिदुक्कडं ॥

पहिले स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत के पांच अतिचार “ वह बंध-छविच्छेष्ट ” द्विपद चतुष्पद आदि जीव को क्रोध वश ताडन किया, घाव लगाया, जकड़ कर बांधा अधिक बोझ लादा, निर्लाञ्छन कर्म-

नासिका बँधीबाई, कर्णछेदन करवाया, खसी किया, दाना घास पानी के समय सार वार न की, लेण देण में किसी के बदले किसी को भूखा रखा, पास खड़ा होकर मरवाया, कैद करवाया, सड़े हुए धान को बिना शोधे काम में लिया, अनाज शोधे बिना पिसवाया, धूपमें सुकाया, पानी यतना से न छाना, ईधन लकड़ी उपले गोहे आदि बिना देखे जलाये, उसमें सर्प विच्छू कानखजूरा किडी मकोडी आदि जीवका नाश हुआ, किसी जीव को दबाया दुःख होते जीव को अच्छी जगह पर न रखा चीन्हा काग कबूतर आदि के रहने की जगह का नाश किया, घोंसले तोड़े, चलते फिरते या अन्य काम काज करते निर्दयपना किया । भली प्रकार जीव रक्षा न की बिना छाने पानी से स्नानादिक काम काज किया, कपड़े धोये । यतना पूर्वक काम काज न किया । चारपाई. खटोला, पीठा, पीठी आदि धूप में रखे ढंढे आदि से भड़काये । जीव संसक्त जमीन को लीपी । दलते कूटते, लीपते या अन्य कुछ काम काज करते यतना न की । अष्टमी चौदस आदि तिथि का नियम तांडा । धूनी करवाई । इत्यादि पहिले स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रतसंबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सुक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन काया कर मिच्छामिदुक्कडं ॥

दूसरे स्थूल मृषावाद विरमण व्रत के पांच अतिसार ॥ “ सहस्सा रहस्य दारे ० ” सहसात्कार बिना विचारे एक दम किसी को अयोग्य आल कलंक दिया स्वस्ती संबंधी गुप्त बात प्रकट की, अथवा अन्य किसी का मंत्र भेद मर्म प्रकट किया । किसी को दुखी करने के लिये खोटी सलाह दी । झूठा लेख लिखा । झूठी साक्षी दी अमानत में खयानत की किसी की धरोड़ वस्तु पीछी न दी कन्या, गौ, भूमि, सम्बंधी लेन देन में लडते झगड़ते बाद विवाद में मोटा झूठ बोला । हाथ पैर आदि की गाली दी इत्यादि स्थूल मृषावाद विरमण व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सुक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन काया कर मिच्छामिदुक्कडं ॥

तृतीय स्थूल अदत्तादान विरमणव्रत के पांच अतिचार ॥ “ तेणाहडप्प ओमे ० ” घर बाहिर, खेत, खलामें, बिना मालिक के भेजे वस्तु ग्रहण की ।

अथवा विना आज्ञा अपने काम में ली । चोरी की वस्तु ली । चोर को सहायता दी ! राज्य विरुद्ध कर्म किया । अच्छी, बुरी, सजीव, निर्जीव, नई, पुरानी वस्तु का भेल संभेल किया । जकात की चोरी की । लेते देते तराजू की डंडी चढाई अथवा देते हुए कमती दिया लेते हुए अधिक लिया रिशवत खाई विश्वासघात किया ठगी की । हिसाब किताब में किसी को धोखा दिया । माता, पिता, पुत्र, मित्र, स्त्री आदिकों के साथ ठगी कर किसी को दिया अथवा पूंजी अलाहदा रखी । अमानत रखी हुई वस्तु से इनकार किया किसी को हिसाब किताब में दगा । पडी हुई चीज उठाई । इत्यादि स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में मूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन कायाकर मिच्छामि दुक्कडं ॥

चौथे स्वदारासंतोष परस्त्रीगमन विरमणव्रत के पांच अतिचार ॥ “ अण्ण रिगहया इत्तर० ” परस्त्रीगमन किया । अविवाहिता कुमारी, विधवा वेश्यादिक से गमन किया । अनंगक्रीडा की । काम आदिकी विशेष जाग्रती की अभिलाषा से सराग वचन कहा । अष्टमी चौदश आदि पर्व तिथि का नियम तोड़ा स्त्री के अंगोपांग देखे, तीव्र अभिलाषा की । कुविकल्प चिंतवन किया पराये जाते जोड़े । गुड़े गुड़ियों का विवाह किया । करे वा कराया । अतिक्रम व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार स्वप्न स्वप्नांतर हुआ । कुस्वप्न आया स्त्री नट, विट, भांड, वेश्यादिक से हास्य किया । स्वस्त्री में संतोष न किया । इत्यादिक स्वदारा संतोष परस्त्रीगमन विरमण व्रत सम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन कायाकर मिच्छामि दुक्कडं ॥

पंचमे स्थूल परिग्रह परिमाणव्रत के पांच अतिचार ॥ “ धण धन्न खित्त वत्थू० ” धन धान्य, क्षेत्र, वस्तु, सोना, चांदी, बर्तन आदि द्विपद दास दासी नौकर, चतुष्पद गौ बैल घोड़ादि, इन नव प्रकार के परिग्रह का नियम नह लिया, लेकर बढ़ाया अथवा अधिक देखकर मूर्खावश माता पिता पुत्र स्त्री के न नाम किया । परिग्रह का प्रमाण किया नहीं करके भूलाया याद न किया । इत्यादि स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर

मिच्छामि दुक्कडं ॥

छट्टे दिक्परिमाणव्रत के पांच अतिचार ॥ “ गमणस्सउ परिमाणे ” ऊर्ध्वादिशि, अधोदिशि, तिर्यग्दिशि जाने आने के नियमित प्रमाण उपरान्त भूल से गया । नियम तोड़ा प्रमाण उपरान्त सांसारिक कार्य के लिये अन्य देश से वस्तु मंगवाई । अपने पास से वहां भेजी । नौका जहाजादि द्वारा व्यापार किया वर्षाकाल में एक ग्राम से दूसरे ग्राम में गया । एक दिशा के प्रमाण को कम करके दूसरी दिशा में अधिक गया । इत्यादि छट्टे दिक्परिमाण व्रतसम्बन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन कायाकर मिच्छामि दुक्कडं ॥

सातमें भोगोपभोग व्रत के भोजन आश्री पांच और कर्म आश्री पंदरां अतिचार ॥ “ सच्चित्ते पडिबद्धे ” सचित्त खानपानकी वस्तु नियम से अधिक अंगीकार की । सचित्त से मिली हुई वस्तु खाई । तुच्छ औषधी का भक्षण किया । अपक्व आहार दुपक्व आहार किया । कोमल इमली, बूट, छट्टे, फलियां आदि वस्तु खाई । सचित्त १ दक्ख २ बिगई ३ वाणह ४ तंवोल ५ वत्थं ६ कुसुमेसु ७ । बाहण ८ सयण ९ विलेवण १० बंभ ११ दिसि १२ न्हाण १३ भत्तेसु १४ ॥ १ ॥

यह चौदह नियम लिये नहीं । लेकर भुलाये । बड़, पीपल, पिल्लंखण, कटुंवर, गूलर, यह पांच फल मदिरा, मांस शहद, मक्खन यह चार महा बिगई, वरफ, ओले, कच्ची मिट्टी, रात्री भोजन, बहुबीजाफल, अचार घोलबड़े, छिदल, बैंगण, तुच्छफल, अजानाफल, चलितरस अनंतकाय, यह बाईस अभक्ष्य, सूरन, जिमीकंद, कच्ची हलदी, सताबरी, कच्चानरकचूर, अदरक, कुवांरपाठां, थोर गिलोय, लसन गाजर, गद्दा-प्याज, गोंगलु कोमल फल फूल पत्र, थेगी हरा मोत्था, अमृत बेल, मूली, नीम की गिलोय पदबहेड़ा, आलुक चालु, रतालु, पिंडालु आदि अनंतकाय का भक्षण किया दिवस अस्त होते हुये भोजन किया । सूर्योदय से पहिले भोजन किया तथा कर्मतः पंद्रह कर्मादान इंगालकम्मे, सादिकम्मे, भादिकम्मे, फोडीकम्मे यह पांच कर्म । दंतवाणिज्ज, लक्ख वाणिज्ज, केस वाणिज्ज, विसवाणिज्ज यह पांच वाणिज्ज, जंत पिन्नलण कम्म, निन्नलंछन कम्म

दवीगदावाणिया, सर दह तलाव सोसणया असइ पोसणया, यह पांच सामान्य, एवं कुल पंद्रह कर्मादान महा आरंभ किये कराये करते जो अच्छा समझा । श्वान, बिल्ली, आदि पोषे पाले । महा सावध पापकारी कठोर काम किया । इत्यादि सातमें भोगोप भोग व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

आठमें अनर्थदंड के पांच अतिचार ॥ “ कंदप्ये कुक्कुइए० ” कंदर्प-कामाधीन होकर नट, विट, वेश्या, आदिक से हास्य खेल क्रीड़ा कर्तुं ल किया। स्त्री पुरुष के हावभाव रूप श्रृंगार संबंधी वार्ता की । विषयरसपोषक कथा की । स्त्रीकथा, देशकथा, भक्तकथा, राजकथा, यह चार विकथा की, पराई भांजगढ़ की । किसी की चुगल खोरी की । आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया । खांडा, कटार, कशि, कुहाड़ी, रथ उखल, मूसल, अग्नि, चक्की, आदिक वस्तु दाक्षिण्यता वश से किसी को मांगी दी । पापोपदेश दिया । अष्टमी चतुर्दशी के दिन दलने पीसने का नियम तोड़ा । मूर्खता से असंबन्ध वाक्य बोला । प्रमादाचरण सेवन किया । घी, तैल, दूध, दही, गुड, छाछ आदिक भाजन (बर्तन) खुला रखा उसमें जीवादिका नाश हुआ । वासी मांखण रखा और तपाया । न्हाते धोते दातण करते जीव आकुलित मोरी में पानी डाला । झूले में झूला । जुवा खेला । नाटक आदि देखा । ढोर, डंगर, खरीदवाये । कर्कश बचन कहा । किचकिचि ली । ताड़ना तर्जना की । मत्सरता धारण की । श्राप दिया भैंसा, सांड, मेंढा, मुरगा, कुत्ते, आदिक लडवाये या इनकी लड़ाई देखी । ऋद्धिमान् की ऋद्धि देख ईर्ष्या की । मिट्टी, नमक, धान, विनोले, विनाकारण मसले । हरी वनस्पति खुंदी । शस्त्रादिक बनवाये । रागद्वेष के वश से एकका भला चाहा । एकका बुरा चाहा । मृत्यु की बांछा की । मैना, तोते, कशूतर, बटेर, चकोर आदि पक्षियों को पींजरे में डाला । इत्यादि आठमें अनर्थ दंड विरमण व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन कायाकर मिच्छामि दुक्कडं ॥

नवमें सामायिक व्रतके पांच अतिचार । “ तिबिहे दुप्पणिहाणे० ” सा-

मायिक में संकल्प विकल्प किया । चित्त स्थिर न रहा । सावध बचन बोला प्रमार्जन किये बिना शरीर हलाया, इधर उधर किया । शक्तिके होते हुए सामायिक न किया । सामायिक में खुले मुंह बोला । नींद ली । विकथा की । घर सम्बन्धी विचार किया । दीपक या बिजली का प्रकाश शरीरपर पड़ा । सचित्त वस्तुका संघटा हुआ । स्त्री विर्यच आदिका निरंतर परंपर संघटा हुआ । मुहपत्ति संघटी । सामायिक अधूरा पारा । विना पारे ऊठा । इत्यादि नवमे सामायिक व्रतसंबन्धी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर भिच्छामि दुक्कडं ॥

दशमे देशावकाशिक व्रतके पांच अतिचार ॥ “ आणवणे पेसवणे • ” आणवणप्पओगे, पेसवणप्पओगे, सद्दाणुवाई, रुवाणुवाई, वहिया पुग्गल प-खेवे, नियमित भूमि में बाहिर से स्वतु मंगवाई । अपने पाससे अन्यत्र भिज-वाई । खुवारा आदि शब्द करके, रूप दिखाके, या कंकर आदि फेंककर अपना होना मालूम किया । इत्यादि दशमें देशावकाशिक व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर भिच्छामि दुक्कडं ॥

अग्यारहवें पौषधोपवास व्रतके पांच अतिचार ॥ “ संथारुच्चार विहि • ” अप्पडिलेहिअ दुप्पाडिलेहिअ सिज्जा संथारण । अप्पडिलेहिय दुप्पाडिलेहिय उ-च्चार पासवणा भूमि । पौषध लेकर सोनेकी जगह बिना पूंजे प्रमार्जे सोया । स्थंडिल आदिकी भूमी भली प्रकार शोधी नहीं । लघु नीति बड़ी नीति करने या परठने समय “ अणुजाणह जस्सुग्गह ” न कहा । परठे बाद तीन वार वोसिरे वोसिरे वोसिरे न कहा । जिनमंदिर और उपाश्रयमें प्रवेश करते हुए निसिही और बाहिर निकलते आवस्सही तीन वार न कही । वस्त्र आदि उप-धिकी पडिलेहणा न की । पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्प-तिकाय, त्रसकाय का संघटा हुआ । संथारा पोरिसी पढ़नी भुलाई । विना सं-थारे जमीनपर सोया । पोरिसीमें नींद ली । पारना आदिकी चिंता की । सम-यसर देववंदन न किया । प्रतिक्रमण न किया । पौषध देरीसे लिया और ज-ब्दी पारा । पर्व तिथिको पौसह न लिया, इत्यादि ग्यारहवें पौषध व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह

सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

बारहवें अतिथिसंविभाग व्रतके पांच अतिचार ॥ “ सच्चित्ते निखिखवणे० ” सच्चित्तवस्तुके संघट्टेवाला अकल्पनीय अहार पानी साधु साध्वीको दिया । देनेकी इच्छासे रुदोष वस्तुको निर्दोष कही । देनेकी इच्छासे पराई वस्तुको अपनी कही । न देनेकी इच्छासे निर्दोष वस्तुको सदोष कही । न देनेकी इच्छासे अपनी वस्तुको पराई कही । गोचरीके वक्त इधर उधर होगया । गौचरीका समय टाला . बेवक्त साधु महाराजको प्रार्थना की । आये हुए गुणवानकी भक्ति न की । शक्ति के होते हुए स्वामी वात्सल्य न किया । अन्य किसी धर्मक्षेत्र को पढ़ता देख मदद न की । दीन दुःखीकी अनुकंपा न की । इत्यादि बारहवें अतिथि संविभाग व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

संलेषणा के पांच अतिचार ॥ “ इह लोए परलोए० ” इहलोगासंसप्पओगे । परलोगासंसप्पओगे । जीवियासंसप्पओगे । मरणासंसप्पओगे । काम भोगासंसप्पओगे । धर्म के प्रभाव से इस लोक संबंधी राजश्रद्धा भोगादिकी बांझा की । परलोक में देव देवेंद्र चक्रवर्ती आदि पदवीकी इच्छा की । सुखी अवस्था में जीने की इच्छा की । दुःख खाने पर मरनेकी बांझा की । काम भोग की बांझा की । इत्यादि संलेषणा व्रत संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या बादर जानने अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

तपाचारके बारह भेद छ बाह्य छ अभ्यंतर । “ अणसणमुणोअरिया० ” अनशन शक्ति के होते हुए पर्वतिथिको उपवास आदि तप न कियाऊनोदरी दो चार ग्रास कम न खाये । वृत्तिसंक्षेप-द्रव्य-खाने की वस्तुओं का संक्षेप न किया । रस विषय त्याग न किया । कायक्लेश-लोच आदि कष्ट न किया । संलीनता अंगोपांगका संकोच न किया, । पचखाण तोड़ा । भोजन करने समय एकासणा आंबिलप्रमुख में चौकी, पटड़ा, अखला आदि हिलता ठीक न किया । पचचखान पारना भूलाया । बैठते नवकार न पड़ा । उठते पचचखाण न किया निधि आंबिल उपवास आदि तपमें कच्चा पानी पिया । वमन हुआ ।

इत्यादि ब्राह्म तप संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवसमें सूक्ष्म या वादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

अभ्यंतर तप “ पाय वित्त विणओ ० शुद्धान्तः करण पूर्वक गुरु महाराज से आलोचना न ली । गुरु की दी हुई आलोचना संपूर्ण न की । देव गुरु संघ साधर्मी का विनय न किया । बाल वृद्ध ग्लान तपस्वी आदि की वैयावच्च न की । वाचना, पृच्छना, परावर्त्तना, अनुप्रेक्षा धर्मकथा लक्षण पांच प्रकार का स्वाध्याय न किया । धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान ध्याया नहीं, आर्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया । दुःख क्षय कर्म क्षय निमित्त दश वीस लोगस्सका काउसग्ग न किया । इत्यादि अभ्यंतर तप संबंधी जो कोई अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या वादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

वीर्याचार के तीन अतिचार पढते, गुणते, विनय, वैयावच्च, देवपूजा, सामायिक, पौषध, दान शील तप, भावनादिक धर्मकृत्य में मन, वचन, काया का बल, वीर्य, पराक्रम फोरा नहीं, विधि पूर्वक पंचांग स्वमासमण न दिया, द्वादशवर्त्त बंदनका विधि भली प्रकार न किया, अन्य चित्त निरादर से बैठा देव बंदन प्रतिक्रमण में जल्दी की । इत्यादि वीर्याचार संबंधी जो कोई पक्ष अतिचार पक्ष दिवस में सूक्ष्म या वादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन वचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥

नाणइ अट्ठ पइवय, समसंलेहण पन्नर कम्मसु ॥

बारस तव विरिअ तिगं, चव्वीस सय अइयारा ॥

“पडि सिद्धाणं करणे ०” प्रतिषेध-अभक्ष्य अनंतकाय बहुबीज भक्षण महारंभ परिग्रहादि किया । देव पूजन आदि षट्कर्म सामायिकादि छै आवश्यक विनयादिक अरिहंत की भक्ति प्रमुख करणीय कार्य किये नहीं । जीव अजीवादिक सूक्ष्म विचार की सहहणा न की । अपनी कुमति से उत्सृज प्ररूपणा की । तथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य राति अराति, परपारिवाद, माया, मृषावाद, मिथ्यात्वञ्जन्य, यह अठारह पापस्थान किये कराये अनुमोदे । दिन कृत्य प्रतिक्रमण विनय वैयावच्च न किया और भी जो कुछ वीतरागकी

आज्ञा से विरुद्ध किया, कराया करते को भला जाना । इन चार प्रकारके अतिचार में जो कोई अतिचार पत्र दिवस सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा हो वह सब मन बचन काया मिच्छामि दुक्कडं ॥

एवंकारे श्रावक धर्म सम्यक्त्वमूल बारह व्रत संबंधी एकसौ चौबीस अतिचारों में से जो कोई अतिचार पत्र दिवस में सूक्ष्म या बादर जानते अजानते लगा तो वह सब मन बचन काया कर मिच्छामि दुक्कडं ॥ इति ॥

शुद्धि पत्र ॥

प्र०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१७	ध्मान	ध्याम
१	१७	वरि	वीर
५	१७	अज	अज
५	२०	औरै	और
१७	६	में	में
१०	१३	सौभ्य	सौम्य
१३	४	पापाद्धि	पापाद्धि
१६	४	उन्हों	उन्होंने
१७	२७	औ	और
१८	१७	पडा	पडा
२१	१६	दाक्षिणता	दाक्षिण्यता
२२	६	धन	बन
१२	११	बो	उसने
२२	२३	सौभ्य	सौम्य
२३	४	जाती जाती	जाती
२३	४	जौर	और
२५	२६	अदश्य	अदृश्य
२५	२६	निस्पृहता	निस्पृहता
२६	१	दष्टांत	दृष्टांत
२६	४	निदोष	निर्दोष
२६	४	दष्टि	दृष्टि
१६	२४	आये	आने
२६	२२	सदाचार	सदाचारी
२६	४	पापीपो	पापियों
३०	३	उतका	उनका
३५	६	जितने	जीतने
३५	८	हैं	है
३५	२५	बुटे बुटे	भिन्न भिन्न
३६	५	मिछेगा	मिलेगा

शुद्धि पत्र

प्र०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३७	५	जीव का	जीवों की
३६	२३	मे	में
४१	४	वेपार	तैयार
४१	१८	देश विरित	देश विरति
४४	१७	हलिता	हीलता
४६	१४	जुओ	देखो
४६	१८	दौ	दो
५२	११	परिणाम	परिमाण
५३	१६	संताष	संतोष
५६	२४	आज्ञा जाता	आना जाना
६०	१२	और है	है और
६०	१५	१२	१२ वां
६०	१६	पका	का
६०	३	व्रतोंदिक	व्रतादिक
६२	१	नाणामि	नाणमि
६२	२	भाणियो	भणियो
६३	५	चारित्रो	चारित्री
६३	३२		काय गुप्ति
६३	३२	परिष्ठा	पारिष्ठा
६४	२	शास्वतो	शास्वति
६५	४	धूप में	धूप में
६५	१७	रहस्य	रहस्य
६६	१२	गइया	गहियाँ
६७	१६	मिठी	मिठी
६८	३	कठो	कठोर
६६	११	स्वस्तु	वस्तु
६६	१३	काइ	कोई
६६	२	जस्तुगह	जस्सगो
७०	१	खाने	आने
३६	१६	कन्या	कन्या

अपूर्व ग्रंथ ॥

श्रीपाल चरित्र अर्थात् श्रीपाल राजा के राज का मूल के साथ हिन्दी भाषान्तर इस ग्रंथ में कर्म और उद्योग की स्पर्द्धा दिखाई है और मनुष्य की बुद्धि से भी अधिक धर्म का प्रभाव है वह दिखाया है. साथ में नव पदजीका माहात्म्य भी बताया है श्रीमान् विनय बिजयजी और यशोबिजयजी महाराज ने काशी में विदेशी पंडितों को जीत बनारस के पंडितों को लाज रखी थी उन्होंने पुराणे संस्कृत और मागधी ग्रंथों का आधार लेकर यह ग्रंथ बनाया है अपने घरके स्त्री और बालकों को अच्छी शिक्षा देना चाहे अथवा जो मुक्ति चाहे उनको यह ग्रंथ अवश्य रखना चाहिये मूल्य दो रुपये ।

ग्रंथ महासुद १५ तक तैयार होगा

आत्मबंद पुस्तक प्रचारक मंडलः

रोसनगुहला

आगरा

सोभाग्यमल हरकाबत

नया बाजार-

अजमेर

नीचे लिखी हुई किताबें तैयार है

जीव विचार मूल और अर्थ	०-३-०
नवतत्व " "	०-५-०
संग्रहणी " "	०-८-०
कल्पसूत्र " "	१-८-०
सामायिक " "	०-२-०
भक्तामर कल्याण मंदिर "	०-२-०
दो प्रतिक्रमण " "	०-४-०
कर्मग्रंथ छप रहा है	
४था प्रवा प्रभु का चरित्र भेट	धर्म रत्न प्रकरण सार भेट

मिलने के पते

आगरा रोसन मुहुक्क

आत्मानंद जैन पुस्तक प्रचारक मंडल,

सोभागमल हरकावत.

अजमेर